• वर्ष ६८ • अंक १५ • मूल्य ₹ २०

अगस्त (प्रथम) २०२५

पाक्षिक

परोपकारी

महान् समाज सुधारक, आर्य समाज के संस्थापक

महर्षि दयानन्द सरस्वती

त्यागमूर्ति श्रीमती गुलाबदेवी,
अधिष्ठात्री श्री मथुराप्रसाद गुलाबदेवी आर्य कन्या पाठशाल, अजमेर

पूज्य चाचीजी, पुत्री सेठ श्री गोपीचंदजी सोमानी का जन्म 1874 में जयपुर में हुआ था। उनकी कोई औपचारिक शिक्षा नहीं हुई थी। उन्होंने घर पर ही अपनी माता से शिक्षा प्राप्त की।

उनका विवाह मथुरा के श्री मथुरा प्रसाद जी भट्टड़ से हुआ था। श्री मथुरा प्रसाद जी आर्य समाज के समर्पित कार्यकर्ता और धार्मिक विचारों वाले थे। वे चाचीजी के मुख्य प्रेरणास्रोत थे। वे दोनों बालिका शिक्षा में रुचि रखते थे। उन्होंने 1898 में अपने घर पर ही अपना विद्यालय प्रारंभ किया। उन्होंने विद्यालय के विकास में अपना तन-मन-धन लगा दिया। उनकी कोई संतान नहीं थी, इसलिए वे विद्यालय को ही अपना बच्चा मानते थे। चाचीजी का अपने विद्यार्थियों से अपार प्रेम था। विद्यार्थी भी उन्हें बहुत प्यार करते थे, इसलिए वे उन्हें ''चाचीजी'' कहकर पुकारने लगे। अजमेर ही नहीं, बल्कि पूरे राजस्थान में वे ''चाचीजी'' के नाम से प्रसिद्ध हो गईं। विवाह के 10 वर्ष बाद उनके पति का देहांत हो गया। उसके बाद वे सामाजिक कार्यों में व्यस्त हो गईं।

अपने जीवन में वे अपनी लगन और परिश्रम के कारण सभी की प्रिय और पूजनीय रहीं। 1963 में 89 वर्ष की आयु में उन्होंने अंतिम सांस ली। हम इस क्षेत्र में उनके समर्पण को कभी नहीं भूल सकते। उनकी एकमात्र इच्छा स्कूल को एक कॉलेज के रूप में विकसित होते देखना था। इसलिए हम आप सभी से विनम्र अनुरोध करते हैं कि उनके इस नेक कार्य में सहयोग और समर्थन प्रदान करें ताकि उनका सपना साकार हो सके।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

*विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।*

वर्ष : ६७ अंक : १५

दयानन्दाब्द: २०१

विक्रम संवत् श्रावण शुक्ल २०८२

कलि संवत् - ५१२६

सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२६

सम्पादक

डॉ. वेदपाल

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,

केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

०८८९०३१६९६१

मुद्रक- डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

८२०९५८६१६६

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-४०० रु.

पाँच वर्ष-१५०० रु.

आजीवन (२० वर्ष) -६००० रु.

एक प्रति - २०/- रु.

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

०७८७८३०३३८२

ऋषि उद्यान : ०१४५-२९४८६९८

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

अगस्त प्रथम, २०२५

अनुक्रम

०१. धर्मान्तरण की विषवेल	सम्पादकीय	०४
०२. श्री पं. युधिष्ठिर मीमांसक	डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री	०६
०३. पुरुष अध्याय - यजुर्वेद ३१-७	डॉ. धर्मवीर	१२
०४. बहुमुखी प्रतिभा के धनी...	श्री कन्हैयालाल आर्य	१५
* नवीन प्रकाशन पर ५० प्रतिशत की विशेष छूट		२२
०५. महर्षि दयानन्द की देन	स्वामी समर्पणानन्द	२३
०६. रामायण का मुख्य घटक कैकेयी	आचार्य उदयवीर शास्त्री	२८
०७. रुबाईयात	श्री गोविन्दस्वरूप व्यास	३०
* साधना, स्वाध्याय, सहयोग के लिए निमन्त्रण		३०
०८. निवेदन		३१
* परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट		३२
* प्रवेश सूचना		३२
०९. संस्था की ओर से....		३३
* 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति		३४

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

धर्मान्तरण की विषवेल

समाचार-पत्रों एवं सोशल मीडिया पर धर्मान्तरण की घटनाएं चर्चा में बनी रहती हैं। धर्मान्तरित होने वाले नवीन धर्म के रूप में इस्लाम स्वीकार करते हैं। कुछ घटनाओं में ईसाई बनने की भी चर्चा होती है। कोई भी घटना चाहे व्यक्तिगत रूप से धर्मान्तरण की हो अथवा सामूहिक रूप में कुछ दिन अथवा एक-दो सप्ताह में भुला दी जाती है। इसमें मुख्य तर्क होता है कि धर्म व्यक्ति की व्यक्तिगत आस्था का विषय है। यदि कोई स्वेच्छा से धर्मान्तरण कर रहा है, तो उसे पूर्व धर्म में रहने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

धर्मान्तरण की घटनाओं पर सूक्ष्मता से दृष्टि डालें तो एक बात स्पष्ट होती है कि इस्लाम अथवा ईसाई बनने वाले व्यक्तियों में सर्वांश न कहें, तो अधिकांशतः हिन्दू मूल से होते हैं। किन्तु हिन्दू धर्म से इतनी बड़ी संख्या में धर्मान्तरित होने पर भी हिन्दू धर्माचार्यों, शंकराचार्यों की वेदना के स्वर मुखरित नहीं होते हैं। क्या यह केवल कुछ व्यक्तियों के वैयक्तिक प्रयासों से रोकना सम्भव है। जबकि धर्मान्तरण कराने वालों में मुख्य नाम भले ही किसी व्यक्ति विशेष का आता हो किन्तु उसके पीछे कोई न कोई संगठन अवश्य रहता है, क्योंकि धर्मान्तरण के लिए खर्च की जाने वाली इतनी विपुल धनराशि का व्यय किया जाना किसी एक व्यक्ति के लिये सम्भव नहीं है।

हिन्दुओं का एक भी वर्ग अथवा किसी भी उपासना पद्धति को स्वीकार करने वाला समाज/समूह संगठित रूप से इसके प्रतीकार के लिए प्रयत्नशील/कृतसंकल्प दिखाई नहीं दे रहा है।

समय-समय पर प्रकाश में आने वाली घटनाओं से यह स्पष्ट होने पर भी कि यह धर्मान्तरण आस्था के कारण अथवा स्वीकार किये जाने वाले धर्म की विशेषताओं से प्रभावित होने की अपेक्षा धन के लोभ तथा ऐसे ही किसी कारण से किया या कराया जा रहा है। बार-बार यह स्पष्ट होने पर भी कि यह केवल उपास्य के प्रति अन्तरण नहीं है, अपितु यह राष्ट्रान्तरण की पूर्व पीठिका है, तब भी न तो हिन्दू समाज और न ही हिन्दू हितैषी कही जाने वाली सरकार इस ओर गम्भीर है।

वर्तमान की सर्वाधिक चर्चित घटना उत्तरप्रदेश से सम्बन्धित है। यद्यपि इसका विस्तार अन्य राज्यों तक है। मुम्बई हाजी अली की दरगाह पर ताबीज, नग तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के पत्थर बेचने वाला जलालुद्दीन जिसे छांगुर बाबा कहकर पुकारा जा रहा है। इस व्यक्ति ने नवीन रोहरा तथा उसकी पत्नी को अपने जाल में फंसा लिया तथा दुबई ले जाकर उनका धर्मान्तरण कराकर जियाउद्दीन तथा नसरीन बना दिया। समाचारों के अनुसार यह दम्पती सम्पन्न था। इसने वहां की सम्पत्ति बेचकर उत्तरप्रदेश के बलरामपुर जिले उतरौला ग्राम में विशाल भवन (४० कमरों से युक्त) बना लिए। इसके बाद धन का प्रलोभन देकर अनेक व्यक्तियों का धर्मान्तरण कराया। इनमें युवतियों की संख्या अधिक है। लाखों रुपये का लालच यह गरीब-असहाय व्यक्तियों को देकर धर्मान्तरण करा रहे थे। छांगुर के भवन निर्माण की देखरेख करने वाले मुंशी के अनुसार उसे धर्मान्तरण के लिये ५ लाख रुपये का ऑफर दिया गया उसके द्वारा ऑफर ठुकराकर पुलिस में शिकायत करने का प्रयास करने पर छांगुर ने उसके विरुद्ध किसी महिला से छेड़खानी का आरोप लगवा कर अभियोग पंजीकृत करवा दिया। यद्यपि उक्त मुंशी ने भी छांगुर के विरुद्ध धर्मान्तरण के प्रयत्न करने की शिकायत लखनऊ में पंजीकृत करवाई। पीड़ित अथवा धर्मान्तरितों के अनुसार ब्राह्मण युवतियों के लिये लगभग १५ लाख, क्षत्रिय जाति की युवतियों के लिये १२-१३ लाख और तथाकथित निम्न वर्ग से आने वाली युवतियों के लिये लगभग १० लाख की राशि का प्रलोभन था। सन् २०४७ तक भारत को इस्लामी देश बनाने के लिये छांगुर के ग्रुप में लगभग ३००० युवा कार्यकर्त्ता देशभर

में इस धर्मान्तरण की विषबेल को बढ़ा रहे थे।

देशभर में युवतियों को बरगलाकर धर्मान्तरित करने के इतने बड़े रैकेट को इतने वर्षों तक L.I.U. तथा पुलिस के किसी भी विभाग द्वारा न पकड़ा जाना निश्चित रूप से शासन तन्त्र की असफलता कही जायेगी, किन्तु उससे भी बड़ी विफलता हिन्दू धर्म के ठेकेदारों की है। जो मंचशूर तो हैं, किन्तु धरातल पर क्या हो रहा है इसके प्रति पूर्णतः उदासीन हैं। एक व्यक्ति विदेशों से फण्डिंग लेकर इतने बड़े भवन बनाने तथा अबाध रूप से वर्षों तक धर्मान्तरण कराता रहे, फिर भी उसे पकड़ा न जा सके। यदि वह पकड़ा गया है तो केवल किसी पीड़िता/पीड़ित परिवार द्वारा लखनऊ तक किसी प्रकार अपनी पीड़ा पहुँचा देने के कारण।

उत्तरप्रदेश की योगी सरकार के संज्ञान में आने पर इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया है तथा उनके अवैध भूमि पर बने भवनों को बुलडोजर ने कई दिनों के प्रयत्न से ध्वस्त कर दिया है।

सरकार तथा न्यायालय छांगुर पर लगे आरोपों पर क्या कार्यवाही करेंगे? इसकी अपेक्षा चिन्ता का विषय होना चाहिये-हिन्दू धर्म और इसके आचार्यों/नेताओं की इस धर्मान्तरण को रोकने के प्रयत्नों के प्रति निष्क्रियता तथा उदासीनता।

यह घटना न तो पहली है और न ही अकेली। जिस ओर पूरा हिन्दू समाज आंख बन्द किए बैठा है, वह है- पंजाब में होनेवाला धर्मान्तरण। पंजाब में इस्लाम के बजाय ईसाई सक्रिय हैं। वहां न तो नाम परिवर्तित किए जा रहे हैं और न ही कोई बाह्य प्रतीक इस प्रकार के हैं कि उन्हें आसानी से पहचाना जा सके। धर्मान्तरण के बाद भी व्यक्ति केश धारण कर पगड़ी पहने है नाम भी वही है। किन्तु उसके उपास्य आदि सब बदल रहे हैं। यह उपास्य, उपासना विधि और उपासना स्थलों का बदलना आने वाले समय में राष्ट्रीयता को किस प्रकार प्रभावित करेगा, उसे हानि पहुँचाएगा इसे ऐतिहासिक सन्दर्भों में देखने पर ही इसकी भयावहता का अनुमान लगाया जा सकता है।

पंजाब की वह भूमि जिसे सिख गुरुओं की भूमि होने का गौरव प्राप्त है। आर्यसमाज के सर्वाधिक सक्रिय होने का गौरव भी पंजाब को ही प्राप्त है। आज उसी पंजाब के जालन्धर में एशिया का सबसे बड़ा चर्च बन रहा है। कितनी संख्या में वहाँ हिन्दू-सिख ईसाई बन चुके हैं इसके प्रामाणिक आंकड़े भले ही उपलब्ध नहीं, किन्तु राजनीतिक रूप से प्रभावी (पूर्व के एक मुख्यमन्त्री भी धर्मान्तरित रहे हैं) तथा सम्पन्न युवाओं के धर्मान्तरण से राष्ट्रीय भाव की कितनी क्षति हो रही है अथवा होगी आज इसकी चिन्ता नहीं की जा रही है।

आन्ध्रप्रदेश के एक पूर्व मुख्यमन्त्री के समय किस प्रकार हिन्दू धार्मिक संस्थानों पर ईसाई विचारधारा के अधिकारी पदारूढ़ हुए यह किसी से छुपा नहीं है।

यदि यह मान भी लें कि आर्थिक तंगी से परेशान व्यक्ति धन के लोभ में इनके जाल में फंस जाते हैं, तो क्या सरकार तथा समाज दोनों का दायित्व नहीं है कि इस अभाव को दूर करने के लिए सचेष्ट हों? यदि दूसरे मुस्लिम या ईसाई देश अपने धर्म के लिए सैंकड़ों-सैंकड़ों करोड़ रुपये भारत भेज सकते हैं, तो क्या इस समाज को अपनी रक्षा के लिए यह सब नहीं करना चाहिए?

जब तक यह समाज अपनी आन्तरिक कमजोरियों को दूर कर समतामूलक समाज की संरचना नहीं करेगा तथा सरकार यह न समझेगी कि यह राष्ट्रान्तरण के प्रयत्न हैं, तब तक स्थायी समाधान कठिन ही दिखाई देता है। हिन्दू समाज यदि अगले १०-२० वर्षों तक धार्मिक स्थलों आदि के निर्माण को रोककर हजारों करोड़ रुपये से इस समस्या के समाधान में कृत प्रयत्न हो, तो सम्भव है कि कुछ सफलता मिले। भय अथवा प्रलोभन के द्वारा धर्मान्तरण कराने वालों को न केवल हतोत्साहित करना अपितु दण्डित करना भी सरकार का दायित्व है। किन्तु कोई भी सरकार बिना जनमत के दबाव के इस प्रकार के कार्य में सक्रिय नहीं होगी। क्या हिन्दू इस विषवेल को समूल नष्ट करने के लिए तैयार हैं? **- डॉ. वेदपाल**

श्री पं. युधिष्ठिर मीमांसक

डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

पिछले अंक का शेष भाग...

१४. किं यास्कीय-निर्वचनानि उन्मत्तगीतानि?- पंचम विश्व संस्कृत सम्मेलन (२१-२६ अक्टूबर १९८१ ई.) के अवसर पर सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के सभागार में पठित।

१५. वेदानां पुनः प्रसारोपायाः - महर्षि दयानन्द निर्वाण शती स्मृति ग्रन्थ (अजमेर-१९८३ ई.) में प्रकाशित।

१६. सोमयागे वृष्टिविज्ञानम्- 'वैदिक संशोधन मण्डल' पूना द्वारा आयोजित यज्ञ विचार सत्र में पठित-१९८५ ई.। इसका परिष्कृत रूप 'दि अडियार लायब्रेरी बुलेटिन' (१९८६ ई.) में 'गोल्डन जुबिली वाल्यूम' के अन्तर्गत प्रकाशित।

१७. पूर्वमीमांसाया रथकाराधिकरणम्- 'आचार्य उदयवीर शास्त्री अभिनन्दन ग्रन्थ' में प्रकाशित-१९८६ ई.।

हिन्दी भाषा में प्रकाशित शोध निबन्ध

१. श्रौत-यज्ञों की वैदिकता-'दिवाकर' (आगरा) के 'वेदाङ्ग' में प्रकाशित-१९३५ ई.।

२. महाभाष्य से प्राचीन अष्टाध्यायी की सूत्रवृत्तियों का स्वरूप-'ओरियन्टल मैगजीन' (लाहौर) में प्रकाशित-१९३९ ई.।

३. वेद के अनुक्रमणी संज्ञक ग्रन्थ और तत्प्रतिपादित ऋषि-देवता-छन्दों पर विचार-'दयानन्द सन्देश' (दिल्ली) - १९३९ ई.।

४. **ऋग्वेद की ऋक्संख्या-** वैदिक धर्म (आँध, सतारा)-१९४० ई.। परिष्कृत संस्करण 'सरस्वती' (प्रयाग)-१९५० ई.।

५. **महाभाष्य के टीकाकार आचार्य भर्तृहरि-** जरनल ऑफ दि युनाइटेड प्रोवेन्सिस् हिस्टोरिकल सोसायटी (लखनऊ) - १९४८ ई.।

६. **सामस्वराङ्कनप्रकार-** वेदवाणी (वाराणसी) - १९४९ ई.। सामवेद की मन्त्रसंहिता और उसके पद पाठ में प्रयुक्त स्वराङ्कन की सोदाहरण व्याख्या।

७. **संस्कृत व्याकरण का संक्षिप्त परिचय-** कल्याण (गोरखपुर) के हिन्दू-संस्कृति अंक में प्रकाशित-१९५० ई.।

८. **आचार्य पाणिनि के समय विद्यमान संस्कृत वाङ्मय-** सरस्वती (प्रयाग)-१९५०।

९. **ऋग्वेद की कतिपय दानस्तुतियों पर विचार-** वेदवाणी (वाराणसी)-१९५२ ई.।

१०. **दुष्कृताय चरकाचार्यम्-** मन्त्र पर विचार-वेदवाणी (वाराणसी) - १९५२ ई.। यही लेख A Comperative & Analytical study of the vedas में भी छपा।

११. **दशमे मासि सूतवे-** मन्त्र पर विचार-कल्याण (गोरखपुर)- १९५३ ई.।

१२. **भारतीय संस्कृति में नारी-** सम्मेलन पत्रिका (प्रयाग)-१९५३ ई.।

१३. वेद-प्रतिपादित आत्मा का शरीर में स्थान-वेदवाणी (वाराणसी)-१९५३ ई.। परिष्कृत संस्करण 'सरस्वती' (प्रयाग)-१९५५ ई.।

१४. **वेदार्थ की विविध प्रक्रियाओं का ऐतिहासिक अनुशीलन-** वेदवाणी (वाराणसी)-१९५४ ई.। पुस्तक रूप-वेदार्थ की विविध प्रक्रियाओं की ऐतिहासिक मीमांसा, तृ.सं.-१९९६ ई.।

१५. **जैनेन्द्र व्याकरण और उसके खिल-** पाठ 'काशी ज्ञानपीठ' द्वारा प्रकाशित-१९५६ ई.

(जैनेन्द्रमहावृत्ति के आरम्भ में मुद्रित)।

१६. **मूल पाणिनीय शिक्षा**- साहित्य (पटना)-१९५९ ई.। इसमें पाणिनीय शिक्षा के विविध पाठों की विवेचना करके सूत्रात्मक शिक्षा के प्रामाण्य का प्रतिपादन मूल पाणिनीय शिक्षा के रूप में किया गया है।

१७. **काशकृत्स्न व्याकरण और उसके उपलब्ध सूत्र**- साहित्य (पटना)-१९६०-६१

इन निबन्धों के अतिरिक्त भी कई महत्त्वपूर्ण शोध निबन्ध मीमांसक जी के निबन्धों के संकलन-रूप ग्रन्थ वैदिक सिद्धान्त मीमांसा (भाग-१, प्रथम संस्करण-२०३३ वि.सं.) में छपे हैं। उसका विवरण इस प्रकार है-

१८. मूल यजुर्वेद, पृष्ठ-२४१-२४९

१९. ऋग्वेद की कतिपय दान स्तुतियों पर विचार, पृष्ठ-२५०-२६३

२०. क्या ऋषि मन्त्रों के रचयिता थे?, पृष्ठ-३०७-३४२

२१ . श्रौत पशुबन्ध यज्ञ और पश्वालम्भ, पृष्ठ-३५४-३९६

वैदिक सिद्धान्त मीमांसा के भाग २, प्रथम संस्करण-१९९२ ई. में प्रकाशित उन शोध निबन्धों का विवरण प्रस्तुत है, जिनका उल्लेख पूर्व पृष्ठों में नहीं हुआ है।

शिक्षा वेदाङ्ग से सम्बद्ध

२२. यमानां स्वरूपम्, संख्याः, लेखनप्रकारश्च-पृष्ठ-५१-५३ तक।

२३. ...चिह्वयोः स्वरूपं तदुच्चारणं च-पृष्ठ-५४-५६ तक।

२४. यकारषकारयोर्जकारखकारोच्चारणयोर्विवेचनम् -पृष्ठ-५७-६० तक।

कल्प वेदाङ्ग से सम्बद्ध

२५. श्रौतयज्ञों का स्थान-भेद से त्रिविधत्व-पृष्ठ-६५-७६ तक।

२६. दर्शपूर्णमास-पृष्ठ-७६-८३ तक।

२७. सुपर्णचितेस्त्रिभिः प्रयोगैः कल्पादौ आदित्यस्य विभिन्नस्थितीनां निरूपणम्-पृष्ठ-९७-१०० तक।

२८. अश्वमेधस्य आधिदैविकं स्वरूपं (राष्ट्रियं स्वरूपं च-पृष्ठ-४२१-४४० तक।

२९. सर्वमेध-पृष्ठ-४४१-४४४ तक।

व्याकरण वेदाङ्ग से सम्बद्ध

३०. वेद में किसी प्रकार का व्यत्यय नहीं-पृष्ठ-२१६-२२६ तक।

३१. वेदार्थ में स्वर-ज्ञान की अनिवार्यता-पृष्ठ-२२७-२३८ तक।

निरुक्त वेदाङ्ग से सम्बद्ध

३२. वेदार्थ की प्रक्रिया के भेद से निरुक्तशास्त्र का त्रेधा प्रवचन-पृष्ठ-२७०-२७९ तक।

३३. निरुक्त के लघु, वृद्ध तथा सस्वर पाठ-पृष्ठ-२८०-२८५ तक।

३४. निरुक्त के विषय में पाश्चात्यों के मानस-पुत्रों की अनधिकार चेष्टा-पृष्ठ-२८६-३२२ तक।

३५. निरुक्तकार यास्क और उसके निर्वचन काल्पनिक नहीं-पृष्ठ-३२३-३३६ तक।

३६. निरुक्ते निर्दिष्टो विश्वकर्मणो भौवनस्येतिहासः-पृष्ठ-३४६-३४९ तक।

३७. उर्वश्याः दर्शनान्मित्रावरुणयो रेतश्चस्कन्द-पृष्ठ-३७१-३७६ तक।

छन्दःशास्त्र से सम्बद्ध

३८. मन्त्राणाम् आधिदैविकार्थ-विज्ञाने छन्दसां साहाय्यम्-पृष्ठ-३८२-३९२ तक।

ज्योतिष से सम्बद्ध

३९. हमारे सौरमण्डल में भूमि से अन्यत्र जैवी सृष्टि नहीं है-पृष्ठ-४०३-४०६ तक।

वेद-विषयक

४०. वेद के अनुक्रमणी संज्ञक ग्रन्थ तथा तत्प्रतिपादित ऋषि, देवता तथा छन्दों पर विचार-पृष्ठ-४५१-४७४ तक।

४१. चतुर्वेद-विषयानुक्रमणी-पृष्ठ-४७५-४७९

तक।

४२. वेदार्थ की त्रिविध वा चतुर्विध प्रक्रिया-पृष्ठ-४८०-४९० तक।

लेखन कार्य का उद्देश्य

''मैंने जितना भी लेखन कार्य किया है, वह चाहे लेखरूप हो, चाहे स्वतन्त्र ग्रन्थ-रूप में, चाहे किसी ग्रन्थ की व्याख्या और किसी ग्रन्थ के सम्पादन में ग्रन्थ के परिचय तथा टिप्पणी आदि के रूप में क्यों न हो, उस सबके पीछे मेरी एकमात्र दृष्टि यह रही है कि किसी न किसी प्रकार स्वामी दयानन्द सरस्वती के विचारों को अधिक से अधिक उन पाठकों तक पहुँचाऊँ, जो सीधे आर्यसमाज के सम्पर्क से अछूते अथवा विपरीत मति रखनेवाले हों। इस कार्य के लिए मैंने उन विषयों को चुना, जिन पर किसी ने भी किसी भी भाषा में मुख्यरूप से ग्रन्थ न लिखा हो। यथा-वैदिक-स्वर मीमांसा, वैदिक-छन्दोमीमांसा और संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास। इसी प्रकार व्याख्या लिखने के लिए भी उन ग्रन्थों को चुना, जो अपने विषय के सर्वमान्य ग्रन्थ हैं। यथा-पातञ्जल महाभाष्य, तथा मीमांसाशाबरभाष्य। सम्पादन में भी उन ग्रन्थों को प्राथमिकता दी, जो पाणिनीय क्रम से संस्कृत व्याकरण पढ़ने-पढ़ाने में सहायक थे।

इससे भिन्न जिन ग्रन्थों का सम्पादन किया, उसका सम्बन्ध भी प्रत्यक्ष वा परोक्षरूप से वेद के साथ था, जिनका सम्पादन वा प्रकाशन श्रीमती परोपकारिणी सभा के 'स्वीकार-पत्र' के सभा द्वारा क्रियमाण कर्मों की धारा १ के अन्तर्गत आये हैं। इनके अतिरिक्त स्वामी दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों के (ऋग्वेदभाष्य के मं. १ सूक्त १०५ तक के अतिरिक्त वेदभाष्य और वेदाङ्ग प्रकाश को छोड़कर) शुद्ध सुन्दर टिप्पणियों एवं विविध परिशिष्टों से युक्त ऐसे संस्करण तैयार किए, जो दयानन्द के किसी भी ग्रन्थ पर शोध करनेवाले के लिए उपयोगी वा मार्गदर्शक होवें। मैंने जो लेखन कार्य किया है, उसकी पृष्ठ-संख्या १३ सहस्र से अधिक है।'' आगे मीमांसक जी ने १३००० (तेरह हजार) पृष्ठों का आकलन और विवरण भी प्रस्तुत किया है।

व्रती जीवन

मीमांसक जी की विशेषता जहाँ उनकी विद्वत्ता और शोधप्रवृत्ति थी, वहीं उनका जीवन-दर्शन भी अनूठा और प्राचीन ऋषि-मुनियों के सदृश था। सुख-सौविध्यपूर्वक जीवन का त्याग करके उन्होंने कुम्भीधान्यब्राह्मणवृत्ति का स्वेच्छया वरण किया था। १९५३-५४ में राजकीय संस्कृत कॉलेज वाराणसी के प्राचार्य श्री पं. नारायण शास्त्री खिस्ते ने उन्हें यह प्रस्ताव दिया था कि आपके लिए नियम शिथिल करके एक ही वर्ष में आचार्य के तीनों खण्डों की परीक्षा देने की व्यवस्था कर दी जायेगी। आप आचार्य परीक्षोत्तीर्ण होकर हमारे कॉलेज में अध्यापन करना स्वीकार कर लें। किन्तु मीमांसक जी ने इसे स्वीकार न किया। गृहस्थ आश्रम में प्रवेश से पूर्व मीमांसक जी ने कुछ व्रत वा संकल्प धारण किया था। वे व्रत इस प्रकार हैं-

१. माता-पिता एवं गुरुजनों की इच्छा और आकांक्षा की पूर्ति के लिए सदा जागरूक रहकर प्रयत्न करना।

२. ब्राह्मणकुल की श्रेष्ठ मर्यादानुसार अपरिग्रह और अयाचक वृत्ति से जीवन निर्वाह करना।

३. गुरु ऋण से मुक्त होने के लिए किसी भी पढ़ने के इच्छुक छात्र के लिए सदा द्वार उद्घाटित रखना, अर्थात् मना न करना।

४. पठनार्थी से किसी प्रकार के द्रव्य लेने की आकांक्षा न रखना, अर्थात् ट्यूशन न करना।

५. स्वाध्याय-प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम् इस शास्त्राज्ञा का यथाशक्ति पालन करना।

६. अर्थ की शुचिता के लिए यथाशक्ति सदा जागरूक रहना।

७. वयोवृद्ध और विद्यावृद्धों के सत्संग के लिए तत्पर रहना।

८. विद्या ददाति विनयम् वचनानुसार विनीत रहना,

कभी अभिमान न करना।

९. सहयोगियों एवं मित्रों से, उनके स्वविरुद्ध आचरण करने पर भी यथोचित सम्बन्ध बनाये रखना। कहना न होगा कि पूज्य मीमांसक जी ने अपने इन वचनों वा व्रतों का आजीवन अक्षरशः पालन किया।

सम्मान एवं पुरस्कार

मीमांसक जी को लगभग ५० वर्ष के संस्कृत भाषा के अध्यापन तथा उसमें किये गये विविध शोधकार्य के लिए जो विशिष्ट सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त हुए, वे इस प्रकार हैं-

ग्रन्थों पर पुरस्कार-(उत्तरप्रदेश शासन द्वारा)-

१. सं. व्या. शास्त्र का इ. भाग १ पर ६०० सन् १९५२

२. वैदिक-स्वर-मीमांसा पर ७०० - सन् १९५९

३. वैदिक-छन्दोमीमांसा पर ५०० सन् १९६१

४. काशकृत्स्नधातुव्याख्यानम् पर ५०० सन् १९७२

५. माध्यन्दिन-पदपाठ पर ५०० सन् १९७३

६. महाभाष्य-हिन्दी व्याख्या, भाग २ पर ५०० सन् १९७४

7. ऋग्वेदभाष्य (स्वामी दयानन्द) भाग १ पर २५०० सन् १९७५

८. ऋग्वेदभाष्य (स्वामी दयानन्द) भाग २-३ पर ३००० सन् १९७६

९. महाभाष्य-हिन्दी-व्याख्या, भाग ३ पर ३००० सन् १९७६

विशिष्ट सम्मान

१. राजस्थान राज्य के संस्कृत विभाग में वेद और व्याकरण शास्त्र सम्बन्धी शोध कार्य पर 3000.00 रू० देकर सम्मानित किया-१९६३ ई.।

२. भारत के राष्ट्रपति संस्कृत भाषा की उन्नति और विस्तार तथा साहित्यिक सेवा के लिए राष्ट्रपति द्वारा सम्मान की घोषणा १५ अगस्त १९७६ को हुई। तद्नुसार १९७७ ई. में महामहिम राष्ट्रपति महोदय ने सम्मानित किया-१९७७ ई.।

३. उत्तर प्रदेश शासन ने व्याकरण शास्त्र सम्बन्धी विशिष्ट सेवा के लिए १५००० का विशिष्ट पुरस्कार दिया-नवम्बर १९७९ ई.।

४. हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा गाजियाबाद में हुए ४२वें अधिवेशन में १३ अप्रैल १९८५ ई. को साहित्य वाचस्पति की मानद उपाधि प्रदान की गई।

५. आर्यसमाज सान्ताक्रुज बम्बई द्वारा वैदिक वाङ्मय के प्रचार-प्रसार और शोधकार्य को ध्यान में रखकर ७५ वर्ष की आयु पूर्ण होने पर १९ मई १९८५ को ७५ सहस्र रूपयों की थैली भेंट करके सम्मानित किया। (यह राशि पण्डित जी ने मीमांसाशाबरभाष्य के प्रकाशन में हेतु भेंट कर दी)।

अति विशिष्ट सम्मान एवं प्रशस्ति

१. ३ जुलाई १९८९ ई. को सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी द्वारा महामहोपाध्याय के सर्वोच्च सम्मान से सम्मानित किया गया। एतद्ध सम्मान्य कुलपति श्री वी. वेङ्कटाचलम् अपने विद्वत्परिषद् के साथ पाणिनि महाविद्यालय बहालगढ़ (सोनीपत-हरयाणा) में पधारे और अपने उद्‌बोधन में यह कहा कि महामहोपाध्याय की उपाधि आपको प्रदान कर हमारा विश्वविद्यालय कृतार्थ/ धन्य हो गया। साथ ही स्वयं में इस महामहोपाध्याय उपाधि की शोभा उसी प्रकार बढ़ गयी जैसी पार्वती जी की ग्रीवा को प्राप्त कर वैजयन्तीमाला की शोभा बढ़ गई थी।

२. जून १९९४ ई. में संस्कृत एकेडेमी उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति तथा प्रख्यात साहित्यकार डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने माल्यार्पण तथा शाल, श्रीफल सहित सम्मानपत्र

समर्पित करते हुए एक लाख का चेक भेंट किया।

३. श्रीमतां वेदमूर्तीनां विश्वनाथश्रौतिमहाभागानां शुभाशंसनम् सा या वारूपिणी देवी सरस्वत्यभिधीयते। सैव देवी तु पुंरूपा जाता सारस्वते कुले।।

नैल्लूर (आन्ध्र) इति मे दृढा मतिः।

१/११/९१ अ. सी. वि1 श्रौती।[२७]

4. जयन्ति ते सुकृतिनो युधिष्ठिरमीमांसकाः।

नास्ति येषां शब्दकाये जरामरणजं भयम्।।[२८]

५. पूज्य मीमांसक जी का स्मरण करते ही एक अपरिग्रही, निःस्पृह, परोपकारी, दृढ़ प्रतिज्ञ, समर्याद एवं जागरूक ब्राह्मण की छवि हमारे मानस-पटल पर उभरती है। महर्षि पतञ्जलि शिष्ट का लक्षण बताते हैं- एतस्मिन् आर्यावर्ते निवासे ये ब्राह्मणाः कुम्भीधान्या अलोलुपा अगृह्यमाणकारणाः किंचिदन्तरेण कस्याश्चिद् विद्यायाः पारङ्गताः तत्रभवन्तः शिष्टाः (महाभाष्य ६/३/१०९) अर्थात्-इस आर्यावर्त्त देश में जो कुम्भीधान्य (अपरिग्रही), निर्लोभ, सदाचार-सम्पन्न स्वतःस्फूर्तप्रातिभज्ञानयुक्त किसी विद्या में पारङ्गत ब्राह्मण हैं, वे आदरणीय शिष्ट हैं। पतञ्जलि के काल में जो रहे हों, सो रहे हों। इस युग में तो हम पण्डित युधिष्ठिर जी मीमांसक को ही इस लक्षण से समन्वित पाते हैं। उनकी अपरिग्रह-साधना में माता यशोदा देवी जी ने प्रमुख भूमिका का निर्वाह किया। अतः वसिष्ठ के साथ अरुन्धती के समान पण्डित जी के साथ उनकी धर्म पत्नी यशोदा देवी जी भी अमर हो गई।[२९]

पाद टिप्पणियाँ

१. आत्म-परिचय, युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ-२८, प्राप्ति स्थान-रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़ (१३१२०११), सोनीपत (हरयाणा), सन् १९८८ ई.-प्रथम संस्करण।

२. वही, पृष्ठ-५५।

३. वही, पृष्ठ-९२।

४. वही, पृष्ठ-९२।

५. आत्म-परिचय, युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ-६४-८२ तक (सामाजिक कार्य में प्रवृत्त होना), पृष्ठ-९६-११७ तक (वैदिकधर्म का प्रचार), पृष्ठ-११८-१२२ तक (आर्य-कुटुम्ब-सहायक द्रव्यनिधि), पृष्ठ-१२२-१३२ तक (महेश्वर में आर्यसमाजभवन-निर्माण), पृष्ठ-१३१२-१३३ तक (लेखन कार्य)।

६. आत्म-परिचय, युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ-९२।

७. आत्म-परिचय, युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ-१७२,१७३,१७५

८. आत्म-परिचय, युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ-१७६।

९. वैदिक सिद्धान्त मीमांसा (भाग-२), युधिष्ठिर मीमांसक, भूमिका, पृष्ठ-३-४। प्रथम संस्करण, १९९२ ई.।

१०. इन सब ऐतिहासिक पहलूओं को जानने के लिए ऋषि दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों का इतिहास (लेखक-पं. युधिष्ठिर मीमांसक) द्रष्टव्य है-प्रथम संस्करण-१९४९ ई., दयानन्द बलिदान शताब्दी परिवर्धित संस्करण-१९८३ ई. तथा द्वितीय संस्करण-२०१८ ई.।

११. (क) ऋषि दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों का इतिहास (पं. युधिष्ठिर मीमांसक),

(ख) मेरी दृष्टि में स्वामी दयानन्द सरस्वती और उनका कार्य (लेखक-पं. युधिष्ठिर मीमांसक) प्रथम संस्करण-२०४८ वि.सं. तथा द्वितीय संस्करण २०५० वि.सं.।

१२. मेरी दृष्टि में स्वामी दयानन्द सरस्वती और उनका कार्य (पं. युधिष्ठिर मीमांसक) पृष्ठ-२-३, प्रथम संस्करण-२०४८ विक्रम संवत्।

१३. आत्म-परिचय (युधिष्ठिर मीमांसक), पृष्ठ-१५३।

१४. वही, पृष्ठ-१९२-१९३।

१५. वर्णोच्चारण शिक्षा चिन्तनम् तथा शिक्षा कल्प आर्ष चिन्तनम् (डॉ. धर्मवीर विद्यावरिधि) में शिक्षा शास्त्र का इतिहास-लेखक पं. युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ-१-

२०। प्रकाशक-प्राच्यविद्या अनुसंधान केन्द्र पाणिनि धाम तिलोरा, पुष्कर क्षेत्र (अजमेर-राजस्थान)।

१६. आत्म-परिचय (युधिष्ठिर मीमांसक), पृष्ठ-२२०।

१७. संस्कृत वाक्य प्रबोध-स्वामी दयानन्द सरस्वती, सम्पादक-पं. युधिष्ठिर मीमांसक, प्राक्कथन-पृष्ठ-५, प्रथम संस्करण-१९६९ ई.।

१८. आत्म-परिचय (युधिष्ठिर मीमांसक), दशम परिशिष्ट-पृष्ठ-१५२।

१९. (क) ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन (द्वितीय संस्करण), मुन्शी समर्थदान के नाम लिखे पत्र-पृष्ठ-४७१, ४८१।

(ख) संस्कारविधिः (स्वामी दयानन्द सरस्वती), द्वितीय संस्करण का मुखपृष्ठ-ज्वालादत्तभीमसेनशर्मभ्यां संशोधितः।

२०. संस्कारविधिः (नवम संस्करण) का सम्पादकीय-युधिष्ठिर मीमांसा-१९९७ ई.। प्रकाशक-रामलाल कपूर ट्रस्ट बहालगढ़, (सोनीपत-हरयाणा)।

२१. वेदोक्त संस्कार प्रकाश-प्रकाशकीय-पृष्ठ-५-८ तथा पृष्ठ-१५-२५ तक।

२२. महर्षि दयानन्द का जीवन चरित, भाग-१-संशोधक का वक्तव्य, पृष्ठ-१-२, प्रकाशक-आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड अजमेर, चतुर्थावृत्ति-२०१८ वि.सं.।

२३. वैदिक सिद्धान्त मीमांसा, भाग-२ (युधिष्ठिर मीमांसक), पृष्ठ-१६१

२४. वही, पृष्ठ-१७-१८।

२५. आत्म-परिचय (युधिष्ठिर मीमांसक), पृष्ठ-१७९-८०, टिप्पणी सं.-११

२६. वही, पृष्ठ-५१

२७. वैदिक सिद्धान्त मीमांसा, भाग-२ के पृष्ठ-२ पर शुभाशंसनम्।

२८. स्मारिका (महामहोपाध्याय पं. युधिष्ठिरजी मीमांसक जन्म शताब्दी) में प्रो. इन्द्रवदन बी. रावल का लेख पंक्तिपावन वैयाकरण को पूजार्घ्य, पृष्ठ-५६, प्रकाशक-रामलाल कपूर ट्रस्ट रेवली (सोनीपत-हरयाणा), संस्करण-प्रथम, नवम्बर-२००९ ई.।

२९. वेदवाणी-पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक संस्मरण विशेषांक, सितम्बर-१९९५ ई. में आचार्य विजयपाल जी का लेख-ऋषिकल्प पण्डित जी, पृष्ठ-१२१, प्रकाशक-पूर्वोक्त।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में कई वर्ष से संचालित आयुर्वैदिक चिकित्सालय सोमवार को छोड़ सप्ताह में ६ दिन मार्च से अक्टूबर सायं ५ से ७ बजे तक व नवंबर से फरवरी सायं ४ से ६ बजे तक दो घण्टे खुलेगा।

इसमें वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक की सेवा उपलब्ध है। चिकित्सा परामर्श व चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। यदि आप अपने धन को इस पुण्य कार्य में लगाना चाहते हैं, तो परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सहयोग भेज सकते हैं। सहयोग भेजकर ८८९०३१६९६१ पर सूचित अवश्य कर देवें।

- मन्त्री

पुरुष अध्याय - यजुर्वेद ३१

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्या

प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रही है। इसी शृंखला में यजुर्वेद-३१ 'पुरुष अध्याय' की व्याख्यानमाला प्रकाशित की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा कर रही हैं।

-सम्पादक

पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।

हम यजुर्वेद के ३१वें अध्याय के दूसरे मन्त्र की चर्चा कर रहे हैं। मन्त्र कह रहा है, हम किसी को उसके स्वामित्व से जानते हैं। हम वस्तुओं को जानते हैं और वस्तुओं का स्वामित्व देखकर स्वामी को पहचानते हैं। जैसे हमने इस शरीर को देखकर स्वामी को पहचाना। तो क्या हम इस संसार को देखकर के संसार के स्वामी को पहचान सकते हैं? यदि हम इस पर विचार करें तो निश्चित रूप से ऐसा लगता है कि इस शरीर के स्वामी को पहचानते हैं। अब पहचानने की जो बात है वो यह है कि हम यह समझते हैं कि हम इसे देखकर पहचान रहे हैं। तो हमारी इच्छा होती है संसार को देखकर हम उसे पहचान लें। यदि आप इस पर विचार करें तो इस शरीर में जीवात्मा को आप देखकर नहीं पहचान रहे हैं। हम सबके पास आँख है किन्तु हमने कभी इन आँखों से अपने अन्दर विद्यमान जीवात्मा को देखा नहीं है। इसलिए यह कहना कि हम देखकर पहचानते हैं यह सच दिखाई नहीं देता। जैसे शरीर से अलग होने पर उसके जाने का पता लगता है, लेकिन जाता हुआ दिखाई नहीं देता। उसके बिना यह शरीर खाली हो गया इसलिए पता लग जाता है कि वह चला गया। वह खाली हो गया, यह पता लगता है उसके लिए अपने यहाँ संस्कृत में एक शब्द है जिनसे हम शरीर के अवयवों को पहचानते हैं, उन शरीर के साधनों को हम इन्द्रियाँ कहते हैं। हाथ, नाक, आँख, कान, पैर आदि शरीर के काम आने वाले जितने अवयव हैं उनको हम इन्द्रियाँ कहते हैं और इन्द्रियों का जो समुदाय है, इसे हम शरीर कहते हैं और यह समुदाय किसी एक जगह पर केन्द्रित है, वह शरीर है और यह शरीर तो इन इन्द्रियों से काम लेता नहीं है। यदि शरीर इन इन्द्रियों से काम लेता होता तो शव के पास सारी इन्द्रियाँ होने के बाद भी वह इनसे काम नहीं लेता या नहीं ले सकता। उसके पास हाथ-पैर भी ठीक है, आँख-कान भी ठीक है लेकिन वो इनको काम में नहीं ले सकता। आप किसी शव की जीभ पर हलवा-खीर रखें, न उसे गर्म-ठण्डा लगता है न उसे मीठा-कड़वा लगता है। आप यह भी नहीं कह सकते कि उसके सारे अवयव खराब हैं, विकृत हैं। उस शव से हम कुछ अवयवों को निकालकर जब किसी आवश्यकता वाले व्यक्ति को लगाते हैं तो वह अवयव काम करते हैं। विशेष रूप से हम शव से मृतक की आँख को निकाल कर हम किसी जीवित शरीर में लगा देते हैं, तो वह आँख देखती है, हम उस आँख से देखते हैं। तो इसलिए यह समझना कि शरीर की जो इन्द्रियाँ हैं, जो अवयव हैं या इस शरीर को देखकर हम उसको समझते हैं तो ऐसा नहीं है। इन आँखों से हम स्वयं को नहीं देख रहे यदि आँखों से देख रहे होते तो यह आँखें स्वयं देखनेवाली होतीं और यदि ऐसा होता तो शव को भी दिखाई देना चाहिए था। उसके हाथ भी चलने चाहिए थे, उसके पैर भी काम करने चाहिए थे। उसके हाथ-पैर आँखें आदि काम नहीं करते हैं, सब ठीक है तो भी नहीं करते। तब पता लगता है यह तो उसके साधन हैं, इनसे वह काम

करता है। अर्थात् आँख से देखता है, आँख स्वयं नहीं देखती। हाथ से करता है, हाथ स्वयं करता नहीं है। तो इनके द्वारा काम किया हुआ जाता देखकर हम काम करने वाले का अनुमान करते हैं। हम काम करने वाले को आँख से नहीं देखते, क्योंकि आँख से देखने वाले वह स्वयं है। तो जैसे हम एक चश्मा पहनते हैं और यह कहें कि चश्मा देखता है, तो आप कहेंगे, यह तो गलत है। चश्मा तो हमने ऊपर से लगाया है और चश्मे को लगाने के बाद हम उसमें से देख रहे हैं। हमें उसके द्वारा कुछ बेहतर दिखाई दे रहा है। जो चश्मे के बिना नहीं दिखाई देता था, वह चश्मे के लगाने से दिखाई दे रहा है। वैसे ही यहाँ आँख भगवान् का बनाया हुआ मात्र चश्मा है, उपनेत्र है और यह जब जीवात्मा को मिलती है, इस शरीर के माध्यम से, तो वह इस शरीर के अन्दर रहता हुआ बाहर का संसार देख सकता है। बाहर के संसार को देखने के लिए आँख रूप ऐनक है। जैसे हम अगर आँख पर लगे हुए चश्मे को हटा दें और चश्मा देखना चाहे तो वह नहीं देख सकता, क्योंकि चश्मा तो जड़ है। तो देखने की क्रिया चेतन के द्वारा हो रही है, चाहे वह देखने की सुनने की, करने की या चलने की है कोई भी है। जितने भी यह सब साधन हैं, यह सब किसी साधक के काम आ रहे हैं वह साधक इन साधनों से पहचाना जा रहा है। बिल्कुल वैसे, जैसे किसी की गाड़ी देखकर आप पहचानते हो कि वो व्यक्ति है। किसी के कपड़े देखकर पहचानते हो कि यह अमुक व्यक्ति है। तो उसकी पहचान से आप उसको जान रहे हो। इसी तरह से यदि हम इस संसार को स्थूल रूप में देख रहे हैं, संसार दिखाई दे रहा है। संसार के अन्दर यदि आप किसी को देखना चाहते हैं, तो जैसे शरीर के अन्दर वाले को देखते हैं, वैसा ही देख सकते हैं। उतना ही देख सकते हैं। संसार की वस्तु परमात्मा है। लेकिन जैसे इस शरीर को देखकर के, उसकी क्रियाओं को देखकर के, शरीर के अन्दर जो कर्ता है, जड़ शरीर के अन्दर जो चेतन है उसको जान लेते हैं, मान लेते हैं कई बार चर्चा में प्रश्न करते हैं- आपने पत्नी को, मित्र को, पिता को, भाई को देखा है? सामान्य रूप से हम कहते हैं हमने देखा है। लेकिन यह बात मिथ्या हो जाती है, जिस दिन वह व्यक्ति मर जाए तब आप कहते हैं कि जो पत्नी, मित्र, पिता, भाई था, वह तो चला गया। जो रह गया, वह तो शरीर मात्र है। वह तो इसके अन्दर था। हमने उसे उस दिन भी नहीं देखा, जब वह गया और जब था तब भी नहीं देखा। तो ऐसी स्थिति में हम बिना देखे सारा व्यवहार कर रहे हैं और एक-दूसरे के साथ विश्वसनीयता भी बनी हुई है। हमने इन आँखों से उस चेतन जीवात्मा को नहीं देखा किन्तु हमारे विश्वास में, हमारी मान्यता में कोई कमी नहीं है। हम पूर्ण रूप से उसको मानते हैं। जैसा हमारा अपने आप पर भरोसा है, जैसा हमारे द्वारा देखी गई व्यक्ति, वस्तु पर भरोसा है, तो क्या वैसा ही भरोसा इस संसार को देखकर उस परमेश्वर पर नहीं किया जा सकता? तो क्या परमेश्वर को देखा नहीं जा सकता? तो मन्त्र कहता है- पुरुष एवेदं सर्वं- यह सब का सब पुरुष ही है। इस शरीर को जब आप देखते हैं तो पता लगता है कि पैर हम हैं। हमारे हाथ में सुई चुभती है, हमें पीड़ा होती है, हमें लगता है, हम हैं। हमारी आँख में तिनका गिरता है, पता लगता है कि ये हमारी ही हैं। हमारे होने की जो पहचान है वो हमारे पैर को लेकर हमारे सिर तक जो भी है, वो हम हैं, क्योंकि वहाँ-वहाँ हमारी सत्ता का हमें पता लगा है। हमारी सत्ता का पता लगता है हमारी पीड़ा से, हमारे सुख से, हमारी लाभ-हानि से। पैर को सर्दी लगती है तो हमें सर्दी लगती है। तो जहाँ-जहाँ हम हैं, वहाँ-वहाँ हमारा अनुभव है। तो उस अनुभव से हम इसको पहचानते हैं, अर्थात् हमारी चेतना वहाँ-वहाँ विद्यमान है। तो इसी तरह हम इस वेद वाक्य को देखें- पुरुष एवेदं सर्वं- अरे! भले आदमी, जब पैर में काँटा चुभा तो पता लगा यहाँ भी तू ही है, हाथ में चुभा तो पता लगा यह भी तू ही है, आँख में गिरा तो पता लगा यह भी तू ही है। वैसे ही इस संसार में कहीं भी देख लें, परमेश्वर ही है। पेड़ में, पहाड़ में, पर्वत में,

पृथ्वी में, आकाश में, जड़ में, चेतन में कहीं भी देख ले। जहाँ-जहाँ तुम इसे देखोगे वहाँ-वहाँ वही है। अब वह है, वही है दोनों में बड़ा अन्तर है। अर्थात् यह जो संसार हमें दिखाई दे रहा है, यह संसार वह क्यूँ है, क्योंकि इसके अन्दर उसका स्वामित्व है, उसका आधिपत्य, उसकी चेतना हमें दिखाई देती है, दिखाई दे सकती है यदि हम इसके अन्दर उसकी चेतना का अनुभव करें, उसके कर्तृत्व का अनुभव करें, उसके बनाए गए नियमों की पालना का अनुभव करें तो दुनिया का कोई भी कण, कोई भी स्थान ऐसा नहीं है जहाँ उसकी उपस्थिति दिखाई न दे या अनुभव में न आए। यह हमको जो पेड़ दिखाई दे रहा है, यह पेड़ भले ही ईश्वर न हो, लेकिन पेड़ में ईश्वर की उपस्थिति आपको दिखाई देती है। उसको अनुभव कर सकते हैं, उसके नियमों को पहचान सकते हैं। उसके कर्तृत्व को देख सकते हैं। तो संसार की सारी की सारी वस्तुएँ उसका अनुभव कराने में समर्थ हैं, क्योंकि वहाँ उसकी उपस्थिति है। जैसे हमारे शरीर में हमारी उपस्थिति हमारे शरीर के किसी भी अवयव से समझी जा सकती है, वैसे ही संसार के समस्त पदार्थों से, समस्त द्रव्यों से, समस्त वस्तुओं से उसको जाना जा सकता है। उसकी क्रिया हमको पता लगती है। अनुभव में आती है, मन्त्र कह रहा है, पुरुष एवेदं सर्वं- यह जो सारा का सारा आपको दिखाई दे रहा है, यह उसकी उपस्थिति होने से वही है। उसकी उपस्थिति का भान करने से इसके अर्थ का जो सन्देह है वो निवृत्त हो जाएगा। जैसे हमें जीवात्मा की भिन्नता का पता लगने से, शरीर और जीवात्मा का इस जड़ और चेतन का भेद मालूम हो जाता है और शरीर में रहने वाले चेतन को हम अनुमान से जान लेते हैं। वैसे ही इस संसार में भी जो जड़ और चेतन दो हैं यह जान लेते हैं। इस शरीर में भी दो थे, एक जड़ और एक चेतन, लेकिन यहाँ हमने उसे तब जाना था अब जड़ को चेतन से अलग कर दिया था। लेकिन यहाँ संकट दूसरा है- संसार के चेतन को संसार की जड़ता से अलग नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह चेतन व्यापक है, बड़ा है, संसार उसके अन्दर है, वह संसार के अन्दर भी है और बाहर भी है। ऐसी स्थिति में हम उसको शरीर की तरह अलग करके देखना चाहें तो यह सम्भव नहीं है। ऐसी स्थिति में फिर एक ही उपाय बचता है कि हम एक को देखकर दूसरे को समझ सकते हैं। इस छोटे पुरुष में चेतना को देखा था, चेतना के बिना भी देखा था। तो चेतना को देखने से इसके अन्दर हुए चैतन्य को हम समझ लेते हैं, उन नियमों से, उन लक्षणों से, उन उदाहरणों से, उन अनुभवों से। वैसे ही अनुभव यदि हम संसार में देखें तो हम यह बात समझ सकते हैं कि वह भी वैसे ही इस संसार के अन्दर है जैसे मैं इस शरीर में हूँ। मैं शरीर में सब स्थानों पर नहीं हूँ, लेकिन मेरी सत्ता के साधन हैं इसलिए मेरे अनुभव हैं। लेकिन परमेश्वर को सत्ता के साधनों की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वह स्वयं है। स्वयं होने से हमें उसका बोध और अधिक आसानी से हो सकता है। संसार में जो मनुष्य है, उनके अन्दर चेतना को ढूँढना, उसकी अपेक्षा से कठिन है जिसकी अपेक्षा से इस जड़ संसार में परमात्मा को ढूँढ़ना है। हमें लगता है कि शायद परमात्मा को ढूँढ़ना कठिन है अपने आपको ढूँढने से। लेकिन इस शरीर में स्वयं को ढूँढने से संसार में परमात्मा को ढूँढना आसान है। शरीर में जीवात्मा विद्यमान है लेकिन वह इसमें व्यापक नहीं है। वह अपने सामर्थ्य से, शक्ति से, प्राणों से, साधनों से चेतना को प्रकट कर रहा है। लेकिन संसार में जो चेतना प्रकट हो रही है वो उसके साधनों से नहीं हो रही, वो उसके साक्षात् होने से हो रही है, जैसे सूर्य स्वयं चमक रहा है। सूर्य को प्रकाशित करने वाला कोई दूसरा नहीं, सूर्य स्वयं प्रकाशमान है। जैसे ही हम सूर्य के प्रकाश में जाते हैं, सूर्य का साक्षात् हो जाता है। उसके साक्षात् करने के लिए किसी दूसरे साधन की आवश्यकता नहीं पड़ती है। तो यह दोनों जो बातें हैं यदि उनको हम समझें तो वेद की यह जो पंक्ति है- पुरुष एवेदं सर्वं- यह सारा का संसार वह पुरुष मात्र है। आपको इसको देखो तो वह दिखता है, यह बात बहुत आसानी से समझ में आती है।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ. स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती

कन्हैयालाल आर्य

प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय एवं श्रीमती कलादेवी के घर आर्यसमाज मन्दिर बिजनौर में २४ अगस्त १९०५ कृष्ण जन्माष्टमी के पावन पर्व पर एक बालक ने जन्म लिया जिसका नाम माता-पिता ने सत्यप्रकाश रखा। उनकी जन्मस्थली होने का गौरव आर्यसमाज मन्दिर बिजनौर को है। इसी आधार पर डॉ. सत्यप्रकाश प्राय: अपने आपको जन्मना आर्यसमाजी कहा करते थे।

उनकी प्रारम्भिक शिक्षा बाराबंकी में हुई। आप १९१८ में इलाहाबाद आ गये। आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.एस.सी. की परीक्षा उत्तीर्ण की। आप इतने योग्य विद्यार्थी थे कि आपको 'महारानी विक्टोरिया स्कॉलरशिप' १९२७ से १९३० तक प्रदान किया गया। १९३० में आपने इसी विश्वविद्यालय में डिमान्स्ट्रेटर के पद पर रसायन विभाग में नियुक्ति पाई। इस दायित्व के साथ-साथ आपने डॉ. नीलरत्नधर के निर्देशन में पीएच.डी. की उपाधि ग्रहण की। आप का पीएच.डी. में विषय था Physico Chamical Studies of Inorganic Jellies इसी के कारण आपको डी.एस.सी. की उपाधि मिली और आप डिमान्सट्रेटर से क्रमश: प्रवक्ता, प्रवाचक तथा प्रोफेसर के पदों पर कार्य करने के पश्चात् १९६७ में सेवानिवृत्त हुए। शोधकार्य की अवधि में आपने साधारण रसायन, कार्बनिक रसायन, बीज ज्यामिति, वैज्ञानिक परिणाम ग्रन्थों की रचना हिन्दी में की।

१९२३ में आपने आर्यसमाज की सदस्यता ग्रहण की ५ फरवरी १९३५ को आप का विवाह एक सुयोग्य विदुषी महिला, प्रतिष्ठित लेखिका डॉ. रत्न कुमारी के साथ हुआ। आपकी पत्नी का स्वभाव भी आपकी तरह अत्यन्त सौम्य था। १ दिसम्बर १९६४ रात्रि १२ बजे हार्ट अटैक से आप की पत्नी का निधन हो गया। डॉ. रत्ना जी अपने पीछे दो पुत्र अरविन्द प्रकाश एवं आनन्द प्रकाश छोड़ गई थी। १३ दिसम्बर १९७६ को प्रिय पुत्र आनन्दप्रकाश का भी निधन हार्टअटैक से हो गया। स्वामी जी का वैराग्य कितना था, आप इस बात से अनुमान लगा सकते हैं। स्वामी जी ने आनन्द प्रकाश की पत्नी डॉ. रंजना प्रकाश से यही कहा, ''बेटी'' आज से तुम इस घर के बेटे हो। अब सारी जिम्मेदारियां सम्भालनी है। यह बताओ आनन्द को घर ले चलोगी या आर्यसमाज। अत: आर्यसमाज हनुमान रोड नई दिल्ली ले जाया गया। वहीं से शवयात्रा निकली। स्वामी जी अविचलित रहे, निर्लिप्त रहे। पुत्र की शवयात्रा में भी सम्मिलित नहीं हुए। उनका संयम अद्‍भुत तथा सराहनीय था और संन्यास ग्रहण करने के पश्चात् तो स्वामीजी तीनों एषणाओं से मुक्त हो गये थे।

संन्यास ग्रहण- विज्ञान परिषद् प्रयाग जिससे वह लगभग अर्द्धशताब्दी तक जुड़े रहे, उसके विज्ञान भवन के प्रांगण में वैदिक पद्धति के आधार पर १० मई १९७१ को स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डी से संन्यास की दीक्षा ग्रहण की। आप आजीवन वीतराग अनुशासित संन्यासी बने रहे। संन्यास आश्रम की मर्यादा के अनुसार आपने आश्रम के कठोरतम उत्तरदायित्व को निरपेक्ष, नि:स्पृह एवं निष्काम रूप से पालन किया। सत्यता तो यह है कि स्वामी सत्यप्रकाश के भीतर सत्य का प्रकाश हो गया था। प्राचीन ऋषि-मुनियों की परम्पराओं के अनुकरणकर्त्ता की भाँति स्वामी जी वस्तुत: यति हो गये थे। उनमें एक ऐसी प्रज्ञा शक्ति विकसित हो गई थी कि वह पुत्र वियोग जैसी विषम विपदायुक्त एवं विपरीत परिस्थितियों में भी विचलित नहीं हुए। लगता है कि आप भी अमर बलिदानी लेखराम जी की पंक्ति में जाकर खड़े हो गये थे। पुत्र आनन्दप्रकाश की अन्त्येष्टि कार्य समाप्त कर, विधवा

पुत्रवधू रंजना प्रकाश स्वामी जी से मिलने गई तो शोक सन्तप्त रंजना जी को स्वामी जी ने यह कहकर सान्त्वना दी, ''ईश्वर की इच्छा जो होना था, हो गया। अब तुम अपना काम देखो, मैं अपना काम देखता हूँ'' कहकर अपने निर्धारित कार्यक्रम कलकत्ता के लिए प्रस्थान कर गये। आपने इस असहनीय समाचार को सुनकर अत्यन्त संयम से सहन किया। इस युग में उनका यह चरम विरक्ति का अद्‌भुत, परन्तु प्रत्यक्ष प्रमाण है। आप पूरा जीवन धार्मिक दिनचर्या और कठोर तपस्चर्या का अनुकरणीय अनुपालन करते रहे। उन्हें धन से बिल्कुल लगाव नहीं था, मायाजाल से सर्वथा दूर रहे। अपने आदर्श के अनुसार, संन्यास के पश्चात् उन्होंने अपना घर, परिवार, नातेदार, रिश्तेदारों से न तो एक पैसा लिया और न उन्हें एक पैसा दिया। वह एक वास्तविक संन्यासी एवं यति की भाँति अत्यधिक अर्न्तमुखी एवं आत्मचिन्तन में निमग्न रहते थे। आपकी कथनी और करनी में एकरूपता का आदर्श था। आप स्तम्ब धर्मसूत्र २१.२२ में निहित संन्यासी सम्बन्धी विचारों के अनुसार संन्यासी दिगम्बर माने गये हैं। अत: वे समस्त वस्त्रों से मुक्त रहें। संन्यासी शीत और उष्ण को सहने में अपने आपको अभ्यस्त कर लेते हैं। इसके उज्ज्वल उदाहरण स्वामी जी थे जो शीतकाल में भी ऊनी वस्त्र नहीं पहनते थे। वह निष्ठापूर्वक अपना संन्यास धर्म निभा रहे थे। उससे उन्हें कोई डिगा नहीं सकता था। वास्तव में स्वामी जी एक तपोनिष्ठ संन्यासी के उज्ज्वल उदहारण थे।

परिव्राजक संन्यासी के रूप में- वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु स्वामी जी भारत भ्रमण के अतिरिक्त १७ बार विदेश भ्रमण पर गये। स्वामी जी अपने विदेश यात्रा की अवधि में वैदिक वाङ्मय के तत्त्वों से वहाँ के निवासियों को अवगत कराने का अपना मुख्य उद्‌देश्य को ध्यान में रखते थे। स्वामी जी मार्च १९८० के अन्तिम सप्ताह में बर्मा तथा थाइलैण्ड गये। जुलाई १९८५ को इंग्लैण्ड, डेनमार्क एवं नार्वे गये। वह फ्रांस, स्पेन एवं जर्मनी आदि यूरोपीय देशों में कई बार यात्रा पर अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान कॉंफ्रेन्स में भाग लेने गये। मई १९८६ में आप अमेरिका के न्यूयार्क नगर में नवनिर्मित आर्यसमाज मन्दिर का उद्‌घाटन किया। दिसम्बर १९८५ में आपने डरबन नगर में अन्तर्राष्ट्रीय वेद सम्मेलन की अध्यक्षता की। जुलाई १९८९ को वेद प्रचार हेतु दक्षिण अफ्रीका तथा जुलाई १९९० में मॉरिशस यात्रा के लिए प्रस्थान किया। स्वामी जी ने नैरोबी तथा अफ्रीका के विभिन्न नगरों में प्रचारार्थ यात्रायें कीं। इसके अतिरिक्त आपने 'कल्चरल मिशन' एवं लैक्चर प्रोग्राम आदि के सम्बन्ध में कनाडा, केन्या, युगाण्डा, तनजानिया, जाम्बिया, गुयाना, सूरीनाम, त्रिनिडाड, जमैका, बैकांक, इण्डोनेशिया, जावा, सिंगापुर आदि देशों में भ्रमण कर, वेद प्रचार एवं भारतीय संस्कृति का सन्देश देने हेतु वास्तविक परिव्राजक बन गये। **आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की एकमात्र उत्तराधिकारी संस्था परोपकारिणी सभा, अजमेर के सदस्य**- जिस संस्था की स्थापना स्वयं महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की हो, उस संस्था का सदस्य होना एक अत्यन्त गौरव की बात है। आपको संस्था का सदस्य बना कर सभी ट्रस्टी गौरवान्वित हुए। प्रथम तो स्वामी सत्यप्रकाश जी को अपने स्वभावत: कोई पद लिप्सा न थी, परन्तु जब वह अस्वस्थ रहने लगे तो उन्होंने यह अनुभव किया कि वह सभा के कार्यक्रमों में सक्रिय होकर भाग नहीं ले सकंगे, अत: उन्होंने स्वयं त्यागपत्र दे दिया। यद्यपि स्वामी जी के त्यागपत्र को सभा ने स्वीकृत नहीं किया तथा उनको अपना सदस्य बनाये रखने में गौरव समझा।

आर्यसमाज के कभी अधिकारी नहीं बने- आधुनिक काल में वैदिक धर्म, ऋषि दयानन्द सरस्वती क दार्शनिक चिन्तन के मूर्तिमान तथा आर्यसमाज के सिद्धान्तों का अक्षरश: करने वालों में सिरमौर देखा जाये तो नि:सन्देह स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती का नाम आदरपूर्वक आता है, वह निष्ठावान् आर्यसमाजी थे। आप

जिस इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में कार्यरत थे, उसके निकट एक आर्यसमाज था जिस के आप साधारण सदस्य अवश्य रहे। आपने कभी उस आर्यसमाज के पदाधिकारी होने की आकांक्षा भी कभी नहीं की। वह महत्त्वाकांक्षी नहीं थे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आप आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संग में अवश्य जाते थे, परन्तु वार्षिक निर्वाचन के दिन वह आर्यसमाज ही नहीं जाते थे। विश्वविद्यालय के अपने सेवाकाल में अपने वेतन का शतांश नियमित रूप से आर्यसमाज को मासिक चन्दे के रूप में निरन्तर देते रहे। आपने इस प्रकार के अपने अविस्मरणीय पदचिह्न छोड़े हैं। आपके ये उत्कृष्ट उदाहरण आर्यसमाजियों के लिए दीपस्तम्भ का कार्य करेंगे। अपको आर्यसमाजों की अस्तव्यवस्तता एवं अस्वच्छता देखकर क्षोभ होता था। आप प्राय: आर्यसमाजों के पदाधिकारियों का इस ओर ध्यान दिलाते रहते थे। वह अपने व्याख्यानों में भी कहा करते थे- ''मन्त्री प्रधानों के घर तो बड़े भव्य सुसज्जित होते हैं, परन्तु आर्यसमाज में दरिद्रता का वातावरण रखते हैं। यदि अपने घर में बढ़िया सोफा रखते हैं तो आर्यसमाज के मैले कुचैले आसनों पर उन्हें शर्म क्यों नहीं आती?'' अत: आर्यसमाजियों को इस सम्बन्ध में स्वामी के निर्दिष्ट पथ का अनुसारण करना चाहिये स्वामी जी आर्यसमाज के सदस्यों से यह अपेक्षा रखते थे, ''आर्यसमाज के सदस्य गहन शोध दृष्टि, तार्किक मस्तिष्क, पदलिप्सा से दूर, अर्थशुचि एवं सरल जीवन पद्धति वाले हों।''

स्वामी जी की अन्तिम यात्रा- स्वामी जी अपने अन्तिम वर्षों में काफी अस्वस्थ रहे। उनकी देखने एवं सुनने की शक्ति काफी क्षीण हो गई थी। बीमारी की स्थिति में एक समय ऐसा अवसर आया कि वह अन्य मित्रों एवं साथियों को भी पहचान नहीं पाये। अन्तत: १८ जून १९९५ को 'ओ३म्' का उच्चारण करके और चिरविदा लेकर अनन्त में विलीन हो गये। यह एक ऐसी क्षति थी जिससे न केवल आर्यसमाज अपितु राष्ट्रीय रूप में भी एक महान् व्यक्तित्व हमारे बीच नहीं रहा। यह ईश्वरीय विचित्र विधान था कि उनका जन्म आर्यसमाज बिजनौर और अन्तिम विदाई भी आर्यसमाज मुन्शीगंज अमेठी से हुई। ऐसी विशिष्ट विभूति कभी-कभी इस धरा पर अवतरित होती है और अपनी सुगन्ध बिखेर कर समाज का एक नई दिशा दे जाती है।

स्वामी सत्यप्रकाश जी तथा स्वतन्त्रता संग्राम- जब ९ अगस्त १९४२ को महात्मा गांधी ने अंग्रेजों के विरुद्ध 'भारत छोड़ो' आन्दोलन छेड़ा। स्वामी जी को इस आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के लिए गिरफ्तार कर लिया गया। आपको लालबहादुर शास्त्री, कैलाशनाथ काटजू, बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, फिरोज गांधी, डॉ. सम्पूर्णानन्द तथा कमलापति त्रिपाठी जी के साथ नैनी सैन्ट्रल जेल इलाहाबाद में रखा गया। प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु' उनके स्वतन्त्रता संग्राम के सैनिक होने पर लिखते हैं, ''भारत का एक ही वैज्ञानिक था जो स्वराज्य संग्राम में जेल गया। वह थे डॉ. सत्यप्रकाश जी। उन पर प्रयाग विश्वविद्यालय के छात्रों में राजनैतिक भावनायें भरने एवं बम बनाने का दोष लगाया गया। आपके पिता पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जी पर यह दबाव बनाया गया कि उनका पुत्र यदि यह लिखकर दे कि उनका राजनीति से कोई सम्बन्ध न था और न रहेगा। पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जी ने पुत्र को ऐसा उपदेश या परामर्श देने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। यह था पिता-पुत्र का राष्ट्र प्रेम।'' उन्होंने अपने पिता श्री के पदचिह्नों पर चलकर अथर्ववेद की सूक्ति ३/३०/२ ''अनुव्रत: पितु: पुत्रो'' को पूर्णत: चरितार्थ किया।

विज्ञान और वैदिक दर्शन का अप्रतिम समन्वय- स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी थे। वे एक ओर प्रतिभावान् विज्ञानवेत्ता थे जबकि दूसरी ओर वैदिक धर्म के अनन्य अनुयायी होने के आधार पर वह प्रगाढ़ वैदिक साहित्य के सृजनकर्त्ता थे। उनमें विज्ञान एवं वैदिक दर्शन का अप्रमि संगम था।

धर्म और विज्ञान में कोई विरोधाभास नहीं उनका मान्य मत इस प्रकार था, ''कैसे कहूँ कि गंगा अधिक पवित्र है और टेक्स कम, कश्मीर अधिक आकर्षक है और स्विट्जरलैण्ड उसके मुकाबले में फीका है। मैं तो पश्चिमी लोगों से भी कहा करता हूँ कि वेद जितना मेरा है, उतना ही तुम्हारा भी, क्योंकि इनके द्रष्टा (या तुम्हारी दृष्टि में रचयिता) मेरे और तुम्हारे दोनों के पूर्वज थे।'' अत: उनका मत था कि वेदों में विश्व सभ्यता के आदि सूत्र विद्यमान है। उनका इन दो विविध विद्याओं में पारंगत होना उनकी कुशाग्र बुद्धि का द्योतक है। यह इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती विज्ञान एवं वैदिक वाङ्मय दोनों में मर्मज्ञ एवं परम पारंगत थे। यह दुर्लभ सम्मिश्रण था।

श्री सोती वीरेन्द्र चन्द्र जी उनके जीवन चरित्र के पुरोवाक् में लिखते हैं, ''भ्रम उत्पन्न कर रखा था कि विज्ञान की शिक्षा हिन्दी माध्यम द्वारा प्राप्त नहीं की जा सकती तथा विज्ञान विषय के ग्रन्थ हिन्दी में नहीं लिखे जा सकते। हिन्दी भाषा इसके लिए उपयुक्त नहीं है। डॉ. सत्यप्रकाश जी ने स्वयं रसायन शास्त्र में अत्यन्त योग्यता के साथ हिन्दी में शिक्षण प्रदान किया। इसके अतिरिक्त विज्ञान के विषय को सर्वसुलभ बनाने हेतु हिन्दी में उच्च स्तर तक के ग्रन्थ लिखकर मार्गदर्शक के रूप में प्रमाणित कर दिया कि हिन्दी इस कार्य के लिए पूर्णरूपेण समृद्ध एवं सक्षम भाषा है।''

साहित्य सृजन- स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती उच्चकोटि के विद्वान् एवं महान् चिन्तक थे। वेदों की ज्ञान गरिमा को विदेशी भी समझ लें अतएवं अंग्रेजी १. चारों वेदों का अंग्रेजी में अनुवाद में विशद रूप से २६ खण्डों अर्थात् ग्रन्थों में चारों वेदों का यथातथ्य प्रस्तुत किया गया अनुवाद स्वामी जी का स्थाई सम्पत्ति की भाँति सर्वोपरि अनुदान है। इसकी सर्वाधिक विशेषता यह है कि इस अंग्रेजी भाषा अनुवाद में व्याख्या को वेदों के सर्वोत्कृष्ट भाष्यकार ऋषि दयानन्द सरस्वती के यथापरक दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर किया गया है।

क. ऋग्वेद संहिता - १०५५२ मन्त्रों की व्याख्या १३ खण्डों में।

ख. यजुर्वेद संहिता - १९७५ मन्त्रों की व्याख्या ४ खण्डों में।

ग. अथर्ववेद संहिता - ५९८७ मन्त्रों की व्याख्या ७ खण्डों में।

घ. सामवेद संहिता - १९७५ मन्त्रों की व्याख्या २ खण्डों में।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह अत्यन्त परिश्रम साध्य, दुस्तर एवं दुरह कार्य भार था, परन्तु स्वामी जी ने अन्य विद्वानों के सहयोग से इसे अत्यधिक विद्वता, प्रवीणता एवं तन्मयता से सम्पन्न किया। यह अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व का ऐसा अपूर्व कार्य है कि यदि यूनेस्को से सम्पर्क किया जाता तो वह इस परियोजना को अवश्य स्वीकार कर लेता। उसके माध्यम से विश्वभर में वेदों का प्रचार-प्रसार करने में सहयोग मिलता। स्वामी जी ने वेदों सम्बन्धी निम्नलिखित ग्रन्थों की भी रचना की-

क. यजुर्वेद एक अध्ययन।

ख. वेदों पर अश्लीलता का व्यर्थ आरोप।

२. वैदिक वाङ्मय सम्बन्धी साहित्य-

i. वेद के Nectoreal Says of the vedas

ii. प्रमुख ११ उपनिषदों की विस्तृत व्याख्या सहित अनुवाद।

iii. परेब्लिस एण्ड डायलग्स फ्राम द उपनिषद्।

iv. शतपथ ब्राह्मण (तीन खण्डों में)।

v. पातञ्जल राजयोग।

vi. गॉड एण्ड हिज़ डिवाइन लव (गायत्री से सावित्री तक)

vii. मैन एण्ड हिज रिलीजन।

viii. द सेल्फ लाइफ एण्ड कान्शेंसनेस

ix. द वैदिक संध्या

x. द क्रिटिकल स्टडी ऑफ द फिलास्फी ऑफ

दयानन्द

xi. दयानन्द ए फिलॉस्फर स्पीचेज़ एण्ड राइटिग्ज (खण्ड)

३. भारतीय प्राचीन वैज्ञानिक साहित्य का अंग्रेजी में सृजन-

i. फाउन्डर्स ऑफ साइन्स इन एन्शियेन्ट इण्डिया- ६७५ पृष्ठ का यह ग्रन्थ है जो कि देश के प्रधानमन्त्री लालबहादुर शास्त्री को समर्पित किया गया है। इस ग्रन्थ के महत्त्व के कारण भारत सरकार के अनुवाद से इसका हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया गया।

ii. क्वायनेज इन एन्शियेन्ट इण्डिया (भारतीय मुद्रा शास्त्र सम्बन्धी वैज्ञानिक सूत्रों पर आधारित)।

iii. ए क्रिटिकल स्टडी ऑफ ब्रह्मगुप्त एण्ड हिज़ वर्क्स।

iv. द बावसाली मैन्युस्क्रिप्ट।

v. बौधायन शुल्व सूत्रम्।

vi. आपस्तम्ब शुल्व सूत्रम्।

vii. द शुल्ब सूत्राज़।

viii. द अग्निहोत्र

ix. द अग्निहोत्र-पॉलूशन एण्ड अदर लाइफ हैजाडर्स।

x. ह्युमैनिटेरियन डाइट

xi. थ्री हैज़ार्डस ऑफ़ लाइफ। डॉ. सत्यप्रकाश जी ने समर्पित भाव से अथक परिश्रम कर तत्कालीन साहित्य को जनजीवन के पूर्णरूपेण प्रमाणित कर दिया कि यह देश विज्ञान के क्षेत्र में अन्य देशों की अपेक्षा सर्वाधिक अग्रणी एवं सर्वोपरि है। अतः इस दिशा में डॉ. सत्यप्रकाश का अप्रतिम, अतुलनीय एवं परम प्रशसंनीय योगदान है।

४. अंग्रेजी में विज्ञान साहित्य का सृजन-

i. ऐन इन्ट्रोडक्शन टू इनॉर्गेनिक केमिस्ट्री

ii. ए टेक्स्ट बुक ऑफ एनालिटिकल केमिस्ट्री।

iii. एडवान्स्ड केमिकल कैलकुलेशन इन इनॉर्गेनिक एनालिटिकल एण्ड फिजिकल केमिस्ट्री

iv. एडवान्स्ड केमिस्ट्री ऑफ रेयर एलिमेन्टस।

v. अल्ट्रासोनिक एण्ड कोलापडस।

vi. सोप एण्ड ग्लिसरीन

vii. केमिस्ट्री फॉर इन्जीनियर्स फॉर यूनिवर्सिटी एण्ड टेक्नॉलाजिकल इन्स्टीच्युशन्स।

viii. फिजिको-केमिकल आस्पेस्ट ऑफ हाई पालियर्स। स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती वेद को विज्ञान सम्मत मानते थे। उनके अनुसार "आधुनिक विज्ञान जिन निष्कर्षों पर आज पहुँच रहा है, उसमें से अनेक वेदों में पहले से ही विद्यमान है।" स्वामी जी के इस प्रशंसनीय प्रयास द्वारा विशेषकर ब्रिटिश वैज्ञानिकों का यह भ्रम दूर हो जाना चाहिये कि विज्ञान के क्षेत्र में वे एवं कतिपय अन्य यूरोपियन वैज्ञानिक ही अग्रणी हैं।

५. हिन्दी में विज्ञान साहित्य के प्रवर्तकः- यह एक निर्मूल अवधारणा व्याप्त हो गई थी कि विज्ञान में उन्नत साहित्य की पुस्तकें अंग्रेजी में ही उपयुक्त रूप से लिखी जा सकती है, हिन्दी इसके लिए असमर्थ घोषित कर दी गई थी। परन्तु डॉ. सत्यप्रकाश जी ने हिन्दी के माध्यम से इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने स्वयं हिन्दी के माध्यम से रसायन शास्त्र जैसा विषय पढ़ाया, अपितु विज्ञान के विश्वविद्यालय स्तरीय साहित्य का सृजन भी किया। यह पुस्तकें इसका प्रमाण है

i. सामान्य रसायन शास्त्र

ii. वैज्ञानिक विकास की भारतीय परम्परा

iii. प्राचीन भरत में रसायन का विकास

iv. रसायनिक विज्ञान की एकल संक्रियाएँ

v. भौतिक और रासायनिक नियताँक

vi. भौतिक रसायन

vii. प्राचीन भारत के वैज्ञानिक कर्णधार

viii. आर्य विज्ञान पुस्तक

विज्ञान परिषद् प्रयास के इसका १९९६ में प्रकाशन हुआ जिसमें निम्नलिखित विषयों पर प्रकाश डाला

क. आधुनिक मानव पर विज्ञान का प्रभाव

ख. प्राचीन भारत में विज्ञान

ग. प्राचीन भारत की वैज्ञानिक भावना

घ. प्राचीन भारत में परिमाणात्मक संकल्पना

ड. प्राचीन भारत में औजारों और उपकरणों का युग

च. भारत में प्राचीन रासायनिक सचित्र।

स्वामी जी के प्रयास के फलस्वरूप भारतीय साइन्स कांग्रेस के अधिवेशनों के साथ एक हिन्दी वैज्ञानिक गोष्ठी भी आयोजित की जानी प्रारम्भ हुई। डॉ. सम्पूर्णानन्द, मुख्यमन्त्री उत्तरप्रदेश ने विज्ञान में अनुसन्धान कार्य को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से सॉइन्टिफिक रिसर्च कमेटी की स्थापना की जिसके डॉ. सत्यप्रकाश मानद सचिव नियुक्त किये गये। इस समिति ने इस दिशा में कई महत्त्वपूर्ण कार्य किये।

६. विज्ञान के क्षेत्र में भारतीय सम्पदा सम्बन्धी विश्वकोश के स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी प्रणेता रहे। स्वामी जी ने डॉ. आत्माराम, महानिदेशक कौन्सिल ऑफ साइन्टिफिक एण्ड इण्डस्ट्रियल रिसर्च, नई दिल्ली को भारत की सम्पदा विषयक विस्तृत विवरण को लिपिबद्ध कराने का प्रस्ताव दिया। कौन्सिल की ओर से स्वामी जी को ही इसका प्रधान सम्पादक बना कर इस कार्य को सम्पन्न करने का निवेदन किया। स्वामी जी ने १२ खण्डों में एक बृहद् 'भारत की सम्पदा' का विश्वकोश तैयार कर दिया। यह विश्वकोश स्वामी जी की Magnum opus कृति के रूप में चिरस्थायी रहेगा। आप विज्ञान परिषद् प्रयाग के भी १९६० से १९६७ तक सभापति भी रहे। डॉ. सत्यप्रकाश का विज्ञान पत्रिका के प्रति समर्पण भाव देखिये, ''जब मैं इस विज्ञान पत्रिका का सम्पादक था, तो इसके पते चिपकाने, भेजने आदि का कार्य स्वयं करता था।'' विज्ञान के क्षेत्र में स्वामी जी के अप्रतिम योगदान के लिए वर्ष १९७७ में उन्हें 'वैज्ञानिक परिव्राजक' के नाम से एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया गया।

७. योगदर्शन पर साहित्य सृजन- वैदिक संस्कृति का प्राण योगदर्शन है। स्वामी से यह गहन विषय भी अछूता न रहा। 'पातञ्जलराजयोग' के अतिरिक्त उनकी ये रचनायें हैं।

१. योग और उसकी अनुभूति

२. योग और सिद्धान्त साधना

३. योग और प्राण सौष्ठव

४. योग और प्राणायाम और चेतनाएँ

५. योग नैतिकता और जीवन मूल्य

८. अध्यात्म सम्बन्धी साहित्य- आपने अध्यात्म पर भी प्रवाहमयी भाषा में अपनी रचनाओं द्वारा प्रकाश डाला है। इस सम्बन्ध में उनकी रचनाएँ ये हैं-

क. अध्यात्म और आस्तिकता

ख. ईश्वर और ईश्वरीय

ग. प्रभु के मार्ग पर

घ. प्रार्थना और चिन्तन

ड. मनुष्य और मानव धर्म

च. विनसिट वेरिटाज

यह जर्मन भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'सत्यमेव जयते।' दक्षिणी अफ्रीका में आप ने भारतीय संस्कृति और दर्शन पर जो व्याख्यान दिये उनका लिखित एवं परिष्कृत- परिवर्द्धित रूप यह ग्रन्थ १९७१ में इलाहाबाद में छपा था।

९. महर्षि दयानन्द सरस्वमी से सम्बन्धित साहित्य- स्वामी की महर्षि दयानन्द सरस्वती के प्रति अगाध श्रद्धा थी। महर्षि दयानन्द जी के निर्वाण शती के अवसरपर ३० अक्टूबर १९८३ को महर्षि से सन्दर्भित १३ टैक्ट सम्पादित कर प्रस्तुत किये जो ये हैं-

१. जीवन वृत्त और कृतित्व २. भागवत धर्म ३. संस्कृत भाषा, शैली और साहित्य ४. प्राचीन परम्परायें ५. भारतीय नारी ६. आस्तिक आख्या ७. मार्टिन लूथर और कार्लमार्क्स ८. मूर्तिपूजा ९. परमात्मा के विविध नाम १०. स्वामी दयानन्द और उनकी परिभाषाएं ११.

नारी की सामाजिक और राजनीतिक चेतना १२. गोपालन आन्दोलन १३. योगनिष्ठा

इन १३ ट्रैक्टों का संग्रह पुस्तक रूप में 'महर्षि दयानन्द समग्र क्रान्ति के अग्रदूत' शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित करवाया तथा उसमें एक १४वाँ ट्रैक्ट 'महर्षि दयानन्द और आर्यवर्तीय राष्ट्र' भी सम्मिलित किया।

१०. आर्यसमाज से सम्बन्धित साहित्य- स्वामी सत्यप्रकाश जी आर्यसमाज के अनन्य अनुयायी थे। आपने आर्यसमाज के सिद्धान्त एवं उद्‌देश्यों को ध्यान में रखते हुए ये मौलिक ग्रन्थ रचे- १. आर्यसमाज-ए-रेनेसा- (ये देश विदेश में दिए भाषणों का संकलन है) २. आर्कीटेक्ट्स ऑफ आर्यसमाज ३. आर्यसमाज:संघर्ष और समस्याएँ ४. आर्यसमाज: सिद्धान्त और प्रगति। इसके अतिरिक्त स्वामी जी की अन्य कई सांस्कृतिक, वैज्ञानिक एवं सामाजिक आदि विषयों पर रचनाएँ है जो विद्वानों में समादृत है।

११. महर्षि दयानन्द सरस्वती निर्वाण शती समृति ग्रन्थ- स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के निर्वाण शती ३० अक्टूबर १९८३ के अवसर पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली ने अत्यन्त बृहद् रूप से स्वामी सत्यप्रकाश जी के प्रमुख संयोजकत्व में अजमेर में 'महर्षि दयानन्द सरस्वती निर्वाण शती समारोह का आयोजन किया था।' स्वामी जी ने इस अवसर पर निर्वाण शती स्मृति ग्रन्थ का हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में सम्पादन किया था जिसका विमोचन प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी जी ने किया था।

१२. अंग्रेजी-हिन्दी मानक कोश- हिन्दी मानक कोश १९७१ में १९५० पृष्ठों का हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से 'अंग्रेजी-हिन्दी मानक कोश' का प्रकाशन किया गया था। इस विशाल ग्रन्थ का सम्पादन स्वामी सत्यप्रकाश जी ने किया था।

१३. स्वामी सत्यप्रकाश जी ग्रन्थों का प्राक्कथन लिखने में अप्रतिम विशेषज्ञ थे। इस कार्य में उनके पास असाधारण दक्षता थी। स्वामी जी के भूमिका लेखन पर अन्य आर्यविद्वान् भी विमुग्ध थे। विशेष रूप से शतपथ ब्राह्मण की भूमिका, चारों वेदों के अंग्रेजी अनुवादों की पृथक्-पृथक् भूमिकायें, वेद विषयों से सम्बन्धित अनुक्रमणियाँ तथा मानक अंग्रेजी-हिन्दी कोश की विशद भूमिकाओं ने पृथक्-पृथक् गौरव ग्रन्थों का रूप धारण कर लिया है। स्वामी विद्यानन्द सरस्वती जी की अनादि तत्त्व दर्शन, स्वामी सम्पर्णानन्द सरस्वती की ऋग्वेद मणि मण्डल, डॉ. कुसुमलता आर्यपुरुष सूक्त का विवेचनात्मक अध्यापन तथा डॉ. भवानीलाल भारतीय की नवजागरण के पुरोधा, ऋषि दयानन्द के भक्त तथा ज्ञानदर्शन सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास की व्याख्या प्रमुख है।

१४. कई संस्थानों की स्थापना- आपने अपने पिता पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जी की जन्मशताब्दी पर उनके सभी ग्रन्थों का नवीन संस्मरण प्रकाशित कराये। अपनी पत्नी श्रीमती रत्न कुमारी जी की स्मृति में अपने निवास स्थान प्रयाग में रत्न कुमारी स्वाध्याय संस्थान की स्थापना की। उच्चकोटि के धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं विज्ञान विषयों पर ग्रन्थों का प्रकाशन कार्य जारी रखने के उद्‌देश्य से लखीमपुर उत्तरप्रदेश में स्वामी सत्यप्रकाश प्रतिष्ठान की स्थापना की। लखनऊ में स्वामी जी के नाम पर स्वामी सत्यप्रकाश वैदिक पुस्तकालय एवं शोध संस्थान की स्थापना की। उनके शिष्य प्रियव्रत दास जी ने भुवनेश्वर में स्वामी सत्यप्रकाश स्मारक ग्रन्थागार की स्थापना की। जिसमें स्वामी जी की २८ पुस्तकों का उड़िया भाषा में अनुवाद हुआ। आपने अभी हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण ही की थी आपने 'ईशोपनिषद्' और श्वेताश्वतर उपनिषद् का अनुवाद 'ब्रह्म विज्ञानं' शीर्षक पुस्तक के अन्तर्गत किया।

१५. कवि के रूप में- २२ वर्ष की आयु में जब सत्यप्रकाश जी एम.एस.सी. परीक्षा दे रहे थे तभी आपकी कविताओं का संग्रह 'प्रतिबिम्ब' नाम से प्रकाशित हुआ। यहाँ यह लिखना उचित रहेगा कि डॉ. सत्यप्रकाश का

काव्य सृजन प्रेम संन्यास लेने के उपरान्त भी जारी रहा।

स्वामी सत्यप्रकाश जी बहुभाषाविद् थे। हिन्दी, संस्कृत एवं अंग्रेजी में पारंगत होने के अतिरिक्त फ्रैंच, जर्मन एवं उर्दू के भी ज्ञाता थे। आपने अफ्रीका की सहुली भाषा में एक पुस्तक की रचना की। आप आधुनिक काल में आर्यसमाज के सिद्धान्तों का अनुसरण करने वालों में सिरमौर थे। आपको हिन्दी विज्ञान सम्बन्धित सेवाओं के लिए १९८३ में तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन तथा दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने सम्मानित किया। १९८३ में बिहार सरकार ने आपको सम्मानित किया। १९९१ में आगरा की एक संस्था ने देश के तत्कालीन उपराष्ट्रपति शंकरदयाल शर्मा द्वारा सम्मानित किया गया। उत्तरप्रदेश सरकार ने अपने सर्वोच्च पुरस्कार से आपको सम्मानित किया १९९३ में आर्यसमाज सान्ताक्रूज, बम्बई ने आपको वेद-वेदांग पुरस्कार से सम्मानित किया। इस महान् त्यागी, तपस्वी, आर्यसमाज के सच्चे सिपाही डॉ. सत्यप्रकाश सरस्वती जी के १२१ वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में शत शत नमन करते हैं।

सहयोगी ग्रन्थ

१. स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती - सोती विरेन्द्र चन्द्र

२. आर्यलेखक कोश - डॉ. भवानीलाल भारतीय

३. वैज्ञानिक परिव्राजक स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती अभिनन्द ग्रन्थ - प्रकाशक विज्ञान परिषद्, इलाहाबाद १९७६

मन्त्री परोपकारिणी सभा, अजमेर

आभूषण

सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभावरूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है। सोने, चाँदी, माणिक, मोती, मूंगा आदि रत्नादि से युक्त आभूषणों के धारण कराने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी नहीं होता क्योंकि आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु का भी सम्भव है। **- सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास**

परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्यों पर महर्षि दयानन्द सरस्वती की २००वीं जन्म-जयन्ती शताब्दी समारोह के उपलक्ष्य में ५० प्रतिशत की छुट

पुस्तक का नाम	वास्तविक मूल्य रुपये
विवाह पद्धति	२०
शिक्षापत्रीध्वान्त निवारण	०२
वेदान्तिध्वान्त निवारण	०२
समाधी	१००
सामवेद शतक	३०
जिज्ञासा विमर्श	१००
इतिहास प्रदूषण	१००
इतिहास साक्षी	५०
वेदामृत	५०
सत्यासत्य निर्णय	२५
The Book of Prayer	35
Kashi Debate	20
A Critique of Swami Naryan Seet	20
An Examination of Vallabh Seet	20
Five Great Rituals of The Day	20
Bhramaccheden	25
Bhranti Nivarana	35
Atmakatha	20
Gokarunanidhi	12
Dayanand Interparetation of Vedas	05
संध्या सुरभि कलेण्डर	३५
महर्षि दयानन्द की शिक्षाएँ कलेण्डर	२५
The Pre Islamic Religious of Arabia	20
वेदमाता	१००
शंका समाधान	७०
ईश्वर	१५०
नवयुग की आहट	६०
वैदिक इस्लाम	१०
पं. आत्माराम अमृतसरी	१००
इतिहास बोल पड़ा	१००
मृत्यु सूक्त	२००
सत्यार्थ सुधा	१५०

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-

दूरभाष-0145-2460120, चलभाष- 7878303382

महर्षि दयानन्द की देन

स्वामी समर्पणानन्द जी सरस्वती

साधारण से साधारण अनपढ़ मनुष्य से लेकर आइन्स्टीन सरीखे मौलिक विज्ञानवेत्ता तक के प्रातःकाल उठते ही आँख खुलने पर जो सबसे पहला प्रश्न हृदय में उठता है वह इस विश्व की पहेली है। यह क्या है? मैं कौन हूँ? मेरा लक्ष्य क्या है? मेरा इस संसार से क्या सम्बन्ध है? यह सबसे बड़ी पहेली है। यह पहेलियों की पहेली है। इसका उत्तर दो अद्वैतवादी देते हैं। एक द्वन्द्वात्मक अध्यात्मवादी दूसरे द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी। एक कहता है कि यह सब कुछ आत्मा ही आत्मा है, दूसरा कहता है यह सब कुछ जड़ प्रकृति ही प्रकृति है। साधारण अनपढ़ मनुष्य से लेकर बड़े से बड़े कर्मयोगी महात्मा तक सबके लिये विश्व की पहली का यह विचित्र समाधान पहेलियों की पहेली है। उसे यह समझ नहीं आता कि अद्वैत में से द्वन्द कैसे पैदा हो गया? चेतन में से अथवा जड़ में से चेतन का विकास कैसे हो गया? वह कहता है कि कैसे हो गया? वैज्ञानिक देवता सिर हिला कर पाण्डित्य से लदी मुद्रा में कहता है-

'अजी बको मत, सिर मत खाओ। कह तो दिया कि बस हो गया।'

साधारण पुरुष कबीर के स्वर में स्वर मिलाकर कहता है तुम पढ़े हुओं से हम बेपढ़े अच्छे:

पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ, पण्डित हुआ न कोय।

ढाई अक्षर प्रेम के, पढ़े से पण्डित होय।।

इसी बात को विद्वन्मूर्धन्य कृष्ण वार्ष्णेय कृष्ण द्वैपायन के मुख से इन शब्दों में कहता है अथवा कृष्ण द्वैपायन कृष्ण वार्ष्णेय के मुख से इस प्रकार कहलाता है-

क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षरउच्यते,
यस्मात् क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तम्ः,
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रार्थतः पुरुषोत्तमः।

सब प्राणियों का देह तथा पञ्चभूतमय जड़ जगत् है। जगत् अर्थात् जड़ परिवर्तनशील जगत् है। प्राणियों में जीवात्मा कूटस्थ है जिसके आधार पर स्मृति खड़ी है।

इस क्षर तथा अक्षर (जीवात्मा) दोनों से ऊपर पुरुषोत्तम है।

इसमें व्याकरण का उत्तम पुरुष और जोड़ दीजिये, क्योंकि ज्ञाता होने की दृष्टि से 'मैं' का स्थान सबसे उत्तम है। परमात्मा तथा कृति दोनों का प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा प्रमाण करने वाला प्रमाता तथा जिन कर्मों का फल भगवान् देता है उनका कर्ता तो मैं ही हूँ। प्रकृति तथा पुरुषोत्तम तो प्रमेय अथवा उपास्य मात्र है। इस दृष्टि से पुरुषोत्तम को पुरुषोत्तम कहने वाला उत्तम पुरुष तो मैं ही हूँ।

इसलिये भगवान् ने उत्तम पुरुष के मुख से कहलाया-

योऽसा वादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्,

मेरी सूक्ष्म तथा स्थूल शरीर की दुनिया छोटी-सी ही सही, परन्तु जिस प्रकार आदित्यादि लोकों में अधिष्ठाता होकर बसा है, इसी प्रकार अपनी छोटी-सी दुनिया में मैं वही हूँ जो तू अपने इस आदित्य (उपलक्षण= आदित्यादिमय ब्रह्माण्ड) में है। अर्थात् अधिष्ठाता, निर्माता, प्रमाता।

इसीलिये भक्त भक्ति के आवेश में विभोर होकर कहता है तेरे आशीर्वाद तो तब ही फलेंगे कि या तो मैं समर्पण द्वारा तू अर्थात्, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड शक्तियों का अधिष्ठाता बन जाऊँ अथवा तू वात्सल्यातिरेक में मेरे समर्पण को इतना स्वीकार कर ले कि मैं जो कुछ करूँ त्वन्मय होकर करूँ। या तो सर्वभूत हितकर भक्तियोग के बल से मैं सर्वशक्तिमान् बन जाऊँ अथवा समर्पण की पराकाष्ठा से वात्सल्य विभोर होकर तू मन्मय हो जा।

तब ही जानूं कि हमारे मुँह माँगे आशीर्वाद मिल गये। सुनिये वेद क्या कहता है-

यदग्ने स्यामहम् त्वं वें वा धास्याअहम्
स्युष्टे सत्या इहाशिषः

ऋ. ८-४४-२३

मैं हूँ, यह सर्वोत्तम ज्ञान है इसीलिये मैं उत्तम पुरुष हूँ। मैं धोखा नहीं सचमुच की जीवित जागृत शाश्वत चेतना शक्ति हूँ। छोटा ही सही, पर हूँ! सचमुच हूँ जबरदस्त, जोरदार, सनातन सत्ता हूँ। और कुछ करके रहूँगा। या तो मैं कर्मयोग द्वारा वहाँ चढ़ जाऊँगा या समर्पण योग द्वारा, जैसे दर्पण सूर्य को अपने में उतार लेता है, इस प्रकार उसे अपने में उतार लूंगा। वह आशीर्वाद देनेवाला, मैं लेने वाला या तो मैं लेके रहूँगा या उसे देना पड़ेगा। कुछ कह लो बात एक ही है।

यह सीधा, सच्चा, सबकी समझ में आ जानेवाला, ब्रह्माण्ड की पहेली का निर्मल, उज्ज्वल प्रकाशमय, शान्तिमय, समाधान, इसका नाम है "वैतवाद", यह है दयानन्द की सबसे पहली देन। यह है परमात्मा का विष्णुरूप अर्थात् यज्ञरूप। यज्ञ का अर्थ है पूजक तथा पूज्य का पूजा साधन द्वारा सङ्गतिकरण। सो अद्वैत में संगतिकरण कैसा? यह है-

विष्णुस्व्यक्षरेण त्रींल्लोकानुदजयत्तानुज्जेषम्।

(यजु. ९-३१)

यह है वैताऽग्नि, यह है पिता पुत्र सन्तान द्वारा सबसे छोटे पारिवारिक संगठन का मूल रूप।

ऋषि दयानन्द कहते हैं अनादि पदार्थ तीन हैं-एक ईश्वर, द्वितीय जीव, तीसरा प्रकृति अर्थात् जगत् का कारण। इन्हीं को नित्य भी कहते हैं। स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश- ६

सो मैं हूँ। 'वह बड़ा इन्द्र है, मैं छोटा इन्द्र हूँ' पर जब मुझे इन्द्रिय मिली है तो मैं इन्द्रियों का इन्द्र हूँ तथा इनके द्वारा इस पृथिवी के अन्त तक और सच पूछो तो पृथिवियों की पृथिवी प्रकृति के अन्त तक, जहाँ भी अपने कर्म यज्ञ की बेदी बना लूं, वहाँ का मैं ही राजा हूँ और मेरे लिये वह छोटा-सा यज्ञ ही संसार का केन्द्र है। शंकर के चेले कहते हैं 'तू परमात्मा है', मैं कहता हूँ "मुझे झूठ बोलना न सिखाइये महाराज"। वे कहते हैं, "अरे! झूठ बिना संसार का व्यवहार नहीं चलता।"

मैं हाथ जोड़ के कहता हूँ, परिस्थितिवादी कहते हैं कि "तू जड़ पदार्थ है और परिस्थितियों की कठपुतली है", मैं कहता हूँ, "धत् परे हट, जड़ होगा तू, मैं तो पूर्णतया चेतन हूँ। यह सारी पृथिवी मेरे बाप की दी हुई जायदाद है, जहाँ चाहूँ अपनी वेदी बनाऊँ, वही मेरा विश्व केन्द्र है। जब मैं पिता से विमुख होता हूँ तो मुझ में जड़ता आती है। पर जब मैं पिता की आज्ञा का यथावत् पालन करता हूँ तो बस फिर क्या पूछना?"

इयंवेदिः परोअन्तः पृथिव्या अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः

ऋग्वेद १, १६४, ३५

मैं परिस्थितियों का पुतला नहीं। पिता मेरी पीठ पर है, लक्ष्य सामने है, परिस्थितियों को चीरता हुआ अन्त को उससे जा मिलूंगा। मैं केन्द्र हूँ, परिस्थितियों के घेरे को चीरने के लिए पैदा हुआ हूँ। लक्ष्य है चार धाम की यात्रा द्वारा सारे मार्ग को आनन्द की धाराओं से आर्द्र करता इन्द्र तक पहुँचूँ। वह कह रहा है-

इन्द्रायेन्दो परिस्त्रव

मेरे चान्द, मेरे इन्दो, चारों ओर आर्द्रता पैदा करता हुआ प्रवाहित हो और मेरी गोद में आ जा।

जहाँ सब से कठोर हिंसक हों, वहाँ आर्द्रता पैदा करता हुआ आ।

शर्यणावति सोमयिन्द्रः पिबतु वृत्रहा
बलं दधान आत्मनि करिष्यन् वीर्यम्
महदिन्द्रायेन्दो परिस्त्रव

ऋग्वेद ९-११३-१

इस यात्रा में चार धाम हैं- पृथिवी, अन्तरिक्ष, द्यौ और स्वः।

ऋ. १९०,३

चौथा धाम स्वः है और पहिले तीन स्वर्ग।

यजु. १३-३१

इस तुरीय धाम की कथा ऋग्वेद नवम् मण्डल ९६ सूक्त १९ मन्त्र से आरम्भ होती है। ११३ सूक्त में कहा है यह तुरीय धाम वह लोक है, जहाँ परम सुख सुरक्षित धरा है।

यस्मिन्लोके स्वर्हितम्।

ऋ. ९,११३-७

जब मैं आया उस दिन सबकी आँखों में आनन्दाश्रु थे। सब ने मुझे कहा इन्दो, फिर शैशव में इन्दु था ही। फिर दो इन्दु एक होकर इस रथ के पहिये बने। यात्रा आगे बढ़ी। जब मेरा घर इन्दुशाला बन गया मैंने और मेरी पत्नी ने कहा ''चलो अब संसार भरके इन्दुओं को अपने इन्दु मानने का अभ्यास करने चलें।'' पुत्र और पुत्रवधू को अपनी इन्दु शाला से खेलने को छोड़ कर हम आगे बढ़ लिये एक पहुंचे हुए के पास पहुंचना सीखना आरम्भ किया। अब पराए इन्दु मुझे अपने इन्दु लगते थे, मेरा मन उधर फँसने लगा। पहुंचे हुए ने कहा, सोम्य आगे बढ़, मैने कहा कहाँ जाऊँ?

कुलपतिजी बोले-

इन्द्रायेन्दो परिस्त्रव

इस तृतीय धाम में तप और श्रद्धा का उपार्जन किया है। अब यह तुम्हारा तृतीय सवन हो लिया। इस बार तुम श्रद्धा रस ये भट्टी पर चढ़ाये गये हो-

ऋतवाकेन सत्येन श्रद्धया तपसा सुत इन्द्रायेन्दो परिस्त्रव

ऋ. ९-११३-२

अब तो मंजिल पर पहुँच गए, अब फँसों मत, यह सूर्य की दुहिता श्रद्धा-

श्रद्धावै सूर्यस्य दुहिता

शतपथ १२-७-३-११

तुझे यहाँ तक ले आई। ऊपर से धर्ममेधसमाधि में स्नान किया इस प्रकार प्रभु कृपा की जलधारा तथा प्रत्यक्ष दर्शन जन्य श्रद्धा की धूप में बढ़ कर पहुँच गया। अब अटका तो भटका। तेरी किस्मत भी क्या कहेगी? प्रभु का गुणगान करने वालों ने तेरा स्वागत किया। उनसे तू और रसीला हुआ। किस्मत की खूबी देखिये-

टूटी कहाँ कमन्द? दो चार हाथ जब कि लबेबाम रह गया। इसलिये -

पर्जन्यवृद्धम् महिषम् तं सूर्यस्य दुहिता भरत्।
तं गन्धर्वाः प्रत्यगृभ्णन् तम् सोमे रसमादधुः
इन्द्रायेन्दो परिस्त्रव।

ऋ. ९-११३-३

जिस कुलपति के पास तू परिष्कृत होने आया था उसने तेरा परिष्कार कर दिया। अब तो-

ऋतंवदन् ऋत द्युम्न सत्यम् वदन् सत्यकर्मन्
श्रद्धां वदन्त्योम राजन धात्रा सोम परिष्कृत
इन्द्रायेन्दो परिस्त्रव।

ऋग्वेद ९-११३-४

नपीतुली प्रत्यक्षादि प्रमाण सिद्ध सत्य ज्ञानमय बात बोलता हुआ उस ज्ञान को ही अपना सर्वस्व समझ कर लुटाता हुआ ईमानदारी से निष्कपट होकर बोलता हुआ, और उस सत्य बचन को कर्म में परिणत करता हुआ, सब में अपनी अनुभव जन्य श्रद्धा की बात कहता हुआ-

बहे चल मेरे रस भरे चन्दा।

देख भूलना नहीं! प्रभु का गान करने वालों ने जो रस तुम में भरा है उसका नाम वीर रस है। कहीं दब कर उस रस में विष न मिला देना। रसीले! यह उग्ररस है और तू फव्वारा-

सत्यमुग्रस्य वृहतः सं स्त्रवन्ति सं स्त्रवाः
सं यन्ति रसिनो रसाः पुनानो ब्रह्मणा हर
इन्द्रायेन्दो परिस्त्रव

ऋ. ९-१११३-५

यह उग्ररस असत्य की शिलाओं तक को फोड़ कर निकलना जानता है। यह बृहत् रस है सबको ऊँचा उठाने वाला है उसके सामने झुकना सीख। पर, दुष्टों के साथ अकड़ना भी सीख। इसके सोते चारों ओर फूट निकलते

हैं तब वीररस के रसिक जानते हैं कि आज कौन रसीला आया है। इसलिये सदा रसिकों, हरियाली के तुल्य मन हरने वाले, अपने वेद ज्ञान के प्रवाहों से सबको पवित्र करता हुआ बहता चल! मेरे रस भरे चन्दा।

तर्क को धर्म गुरुओं ने गाली दी है। ऋषि दयानन्द की अद्‌भुत देन है ''तर्क को उचित स्थान पर प्रतिष्ठित करना'' वेद कहता है। चक्षोः सूर्यो अजायत (पुरुष सूक्त १२ मन्त्र) चक्षु आदि इन्द्रियों से प्राप्त प्रत्यक्ष ज्ञान ही तो वह सूर्य है जिसकी पुत्री श्रद्धा है। दयानन्द ने हमें तर्क की प्रतिष्ठा सिखाई और उसकी पुत्री श्रद्धा को भी उचित स्थान दिया इसलिये नपीतुली प्रत्यक्षादि प्रमाण विरूद्ध बात मत कह–

यत्र ब्रह्मापवमान छन्दस्यां वाचं वदन्।
ग्राव्णा सोमे महीयते सोमेनानन्दम्
जनयन्निन्द्रायेन्दो परिस्त्रव।।

ऋ. ९-११३-६

जहाँ चार वेदों के ज्ञाता विद्वान् सबको पवित्र करते हों उस पवित्र सत्सङ्ग रूप भवन में नपीतुली बात बोलता हुआ, विद्वज्जनों के बाद संघर्ष में पीस कर यथार्थ परीक्षापूर्वक निकाले हुए ज्ञानरस से सबके लिये आनन्द उत्पन्न करता हुआ, बहता चल मेरे रस भरे इन्दो।

जहाँ अन्ध विश्वास का नाम नहीं है–

यत्रज्योतिरजस्त्रं यस्मिंल्लोके स्वर्हितम्
तस्मिन् मांधेर्ह पवनामृते लोके अक्षित
इन्द्रायेन्दो परिस्त्रव।। ७।।

हे पवमान हम भक्त जन तेरे पास आए हैं विशेष कर में शिष्य होकर तेरे पास आया हूँ। मुझे उस लौक में पहुंचा जहाँ निरन्तर ज्योति जलती है, जहाँ नित्य आनन्द है। उस अक्षय अमृत के धाम में मुझे पहुँचा।

जहाँ वह सुव्यवस्था है जो आकाश में सौर मण्डल में देखने में आती है जहाँ द्यौः को प्राणायामादि द्वारा बाह्य आकाश से उतार कर मनुष्य अपने अन्दर रोक लेते हैं यह सम्पूर्ण मानव प्रजा (मनुष्य वा आपः, शत ७-३-१-२०) जिस ओर बह रही हैं, हे पवमान उस अमृत धाम में मुझे भी पहुँचा।

इन्द्रायेन्दो परिस्त्रवः।। ८।।

जिस कैवल्य में मनुष्य परम ज्योति के स्वरूप में अवस्थित होता है, इसलिये जहाँ सब लोग ज्योतिष्मान् हैं जहाँ शरीर बन्धन न होने के कारण जीव स्वच्छन्द विचरते हैं उस धाम में मुझे भी मृत्यु रहित कर दे।

इन्द्रायेन्दो परिस्त्रवः।। ९।।

जहाँ कामनाएँ और उनके निमित्त किये जाने वाले नियम सब सम्पूर्ण हो जाते हैं, जहाँ बड़ों से बड़े परमात्मा का धाम है। उस प्रभु प्रेम के बन्धन को मेरे लिये अमृत कर दो हे इन्दो–

इन्द्रायेन्दो परिस्त्रवः।। १०।।

यत्रानन्दाश्चय मोदाश्च मुदः प्रमुदः आसते
कामस्य यत्राप्ताः कामास्तत्र मा मृतं कृधि
इन्द्रायेन्दो परिस्त्रव।। १०।।

जहाँ मानसिक और शारीरिक आनन्द दूसरों के साथ बातचीत का आनन्द तथा नाना प्रकार की कला कृतियों का प्रमोद सब इकट्ठे बसते हैं, जहाँ कामना की भी सब कामना पूर्ण हो जाती है, उस प्रभु प्राप्ति के आनन्द में स्नान करा के आनन्द में स्नान कराके मुझे भी मृत्यु भय रहित कर दे।

इन्द्रायेन्दो परिस्त्रवः।। ११।।

इस तर्क बुद्धि के सहारे ऋषि दयानन्द हमें दोनों ओर की खन्दकों से बचाता हुआ ले चलता है। न तो यहाँ अन्ध श्रद्धा है, न नास्तिकता। न तो अकर्मण्य भक्तिवाद है, न भक्तिहीन कर्मयोग। न तो तर्कहीन श्रद्धा है, न श्रद्धाहीन तर्क अर्थात् प्रत्यक्ष अनुभव को भी निषेध करनेवाला तर्क। न तो पलायनवादी वैराग्य है, न पलायनवादी विषय शक्ति। न तो अनन्त नरक है, न अनन्त मोक्ष। यह मनुष्य जीवन है, स्वर्ग नरक धाम है। यह जीवन ही कर्मभूमि है। राज-योग भक्तियोग सब कर्मयोग के साधन हैं। न वैष्णवों का रङ्गीलापन है, न

नास्तिकों की रुक्षता। न जैनों की अहिंसा है, न कम्यूनिस्टों की हिंसा। न तो हिंसा रस के लिये हिंसा है, न लोक कल्याण विघातिनी अहिंसा। लक्ष्य सामने है-

इन्द्रायेन्दो परिस्त्रवः

साधन हैं इन्द्रियें तथा जीवन का समय। साधन है वर्णाश्रम व्यवस्था। इस व्यवस्था में न तो पूंजीवादी अर्थतन्त्रता है, न कम्युनिस्ट व्यक्तित्व नाशिनी परतन्त्रता। लोक कल्याणकारी कार्य करना पड़ेगा, यह परतन्त्रता है। अविद्या अभाव अन्याय, अकर्णण्यता, किस शत्रु से लड़ना है। इस चुनाव में पूर्ण स्वतन्त्रता। यह अविचलित रूप से सीधा लक्ष्य की ओर ले जाने वाला सीधा मार्ग ही ऋषि की सर्वश्रेष्ठ देन है। न तो प्राचीन हर बात अच्छी है और न वेदों तक का परित्याग है। न देश मोह है, न देश द्रोह है। देश भक्ति है पर वह विश्व कल्याण का मार्ग बनाने वाली देश भक्ति है। दूसरे देशों को कुचल कर अपने देश का भला चाहनेवाली स्वार्थमय क्रूर देशभक्ति नहीं जिसका ठीक नाम देश मोह है। दबाव में आकर देश के जूते का भी अपमान वह सह न सकता था।

मनुष्य के जन्म से लेकर मरण पर्यन्त तथा परिवार के संगठन से लेकर चक्रवर्ती सार्वभौम महाराज्य सभा के निर्माण तक कोई विषय उस ऋषि से नहीं छूटा इसलिये यदि उसकी सब देन एक शब्द में कहनी हो तो वह सत्यार्थप्रकाश है।

परन्तु इन सब देनों से बड़ी देन ऋषि का जीवन स्वयम् है। जो कहा सो करके दिखा दिया। खण्डन में स्वदेश विदेश किसी का पक्षपात नहीं किया। राष्ट्र तथा धर्म के विरोध में लड़ने के लिए सम्पूर्ण राष्ट्र को तैयार किया। देश की एकता के निमित्त गुजराती का पक्षपात छोड़कर हिन्दी को अपनाया, परन्तु आर्यसमाज के नियम बनाने के समय छठे नियम में स्पष्ट लिख दिया ''संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य हैं।'' गोण रूप से बचा खुचा समय विश्व कल्याण को, मुख्य उद्देश्य ऋषि दयानन्द ने ही बनाकर दिखाया।

परन्तु व्यक्तिगत रूप से जो उन्हें विष देने आया उसे मुक्त करवाते समय कहा ''मैं संसार को कारागार में बन्द करने नहीं आया किन्तु कारागार से छुड़ाने अब आया हूँ'' और अन्त में १३वीं बार विष खाकर विष देनेवाले को दयार्द्र होकर, धन देकर विदा किया और दयानन्द इस नाम को सार्थक किया।

अन्त में मृत्यु काल में सबसे बड़ी परीक्षा थी। इस मृत्यु ने गुरुदत्त सरीखे नास्तिक में भक्तिरस का संचार कर दिया। इसे मृत्यु कहें वा जीवन शक्ति का स्रोत। ग्रन्थ भी देन, जीवन भी देन और अन्त में मृत्यु भी देन।

देनेवाले बहुत देखे, पर ऐसा दिलदार नहीं देखा। कहते हैं देनेवाले को, बस वह देवताओं का देवता था। धनदाता, कोई अन्नदाता, परन्तु ऋषि दयानन्द ने इस उसकी खोई हुई आत्मा फिर प्रदान की। वैदिक भाषा में देवता कोई वस्त्रदाता, कोई अभागे मानव समाज को उसकी खोई हुई आत्मा फिर प्रदान की।

इसलिये, आत्मदा! तुझे बार बार प्रणाम हो!!

विद्या के कोष की रक्षा व वृद्धि राजा व प्रजा करें

वे ही धन्यवादार्ह और कृत-कृत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें जिससे वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सास, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्ट मित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्त्तें। यही कोष अक्षय है, इसको जितना व्यय करे उतना ही बढ़ता जाये, इस कोष की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी है।

(सत्यार्थ प्रकाश सम्मुलास ३)

रामायण का मुख्य घटक कैकेयी

रामायण को लक्ष्य कर सर्वसाधारण मात्र में प्राय: यह चर्चा सुनने में आती है कि यदि कैकेयी न होती, तो रामायण न बनती। कैकेयी ने इसमें जो अपना भाग अदा किया, रामायण बनने का वही मुख्य कारण व घटक है।

'रामायण' नाम में दो पद हैं- 'राम' और 'अयन'। राम एक व्यक्ति का नाम है और अयन नाम है एक विशेष गति का जो वस्तु या व्यक्ति एक जगह से चलकर दूसरी जगह दिखाई दे और फिर पहली, जगह वापस आ जाय; उस वस्तु या व्यक्ति की ऐसी गति को 'अयन' कहते हैं। ज्योतिष शास्त्र में इस पद का प्रयोग सूर्य की उत्तरायण-दक्षिणायन गति के रूप में होता है। सूर्य मकर राशि से-प्रात: प्रतिदिन निकलते हुए- थोड़ा-थोड़ा, उत्तर की ओर बढ़ता दिखाई देता है। छह महीने के बाद कर्क राशि से पुन: दक्षिण की ओर बढ़ता दिखाई देने लगता है। मकर राशि आने तक वह गति पूरी हो जाती है। इस प्रकार सूर्य छह महीने तक दक्षिण से उत्तर की ओर चलता दिखाई देकर अगले छह महीने में उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ता हुआ फिर वहीं आ जाता है, जहाँ से एक वर्ष पहले चला था। यह सूर्य की अयन गति है इसमें काल और प्रदेश सीमित रहते हैं।

इसी प्रकार राम किसी नियत निर्देशानुसार एक समय अयोध्या से चलकर लंका तक पहुँचे, वहाँ से पुन: नियत समय में अयोध्या वापस आ गये; यह राम की अयन गति है। इसका विशिष्ट विवरण जिस ग्रन्थ में है, उसका नाम भी 'रामायण' है। इस ग्रन्थ की रचना वाल्मीकि मुनि ने की है, अत: इसे 'वाल्मीकि रामायण' कहा जाता है।

इस प्रसंग में रानी कैकेयी ने जो भूमिका निभाई उस आधार पर उसे कालान्तर में स्वार्थी, राम के प्रति विद्रोही जैसे निन्दनीय दोषों में लपेट दिया गया है। युगों से उसका पावन कलेवर इसी धूमिल आंधी के बीच कलुषित बना रहा है। वर्तमान युग में सम्भवत: सर्वप्रथम श्री गजानन्द आर्य ने कैकेयी के पावन कलेवर पर आरोपित उस कलुष को अपने प्रतिभाजन्य शोधक से धो डालने का सफल प्रयास किया है। यह एक बड़ी अटपटी बात लगती है कि जो रामायण का मुख्य घटक पात्र है, वही लाञ्छित व कलंकित समझा जाय, सम्भव है प्रारम्भ में ऐसी स्थिति अवश्य ही न रही होगी।

आर्य की उद्भावना है, राम को वन भेजने के प्रसंग में कैकेयी का कोई स्वार्थ न था, न राम के प्रति किसी प्रकार के विद्रोह की भावना। राम के प्रति भरत की अपेक्षा भी उसका आन्तर स्नेह अधिक था। उसने राम को वन भेजने के लिये जो आग्रह किया है, उसके पीछे एक सुनिर्धारित योजना थी, जो देवों तथा दण्डकारण्य वासी ऋषि-मुनियों के सहयोग से बनाई गयी थी, जिसका लक्ष्य था राक्षस वर्ग का ध्वंस कर देवों तथा ऋषि-मुनियों की अनुकूलताओं व सुविधाओं को उजागर करना। आज हम अनेक प्रकार की कल्पना कर सकते हैं। राक्षसों के ध्वंस की भावना से अकेले राम को वन न भेजकर राम-भरत सब मिलकर सेना के साथ उस के ध्वंस के लिये धावा कर सकते थे। अन्य मार्ग सुझाये जाने की भी कल्पना की जा सकती है। पर वह सब व्यर्थ है। यदि अन्य कोई मार्ग इस कार्य की सिद्धि के लिये उस समय रहा होता, तो तात्कालिक मनीषीजन अवश्य उसी का सहारा लेते। जहां तक धावा बोलने की बात है, नितान्त असंगत है। अयोध्या दरबार या साम्राज्य का वो रावण या राक्षस वर्ग ने कुछ बिगाड़ा नहीं था, अयोध्या दरबार के पास रावण पर आक्रमण करने का कोई बहाना नहीं था। ऋषि: मुनि दण्डकारण्य में रहते थे, वह भूभाग रावण-प्रशासन के अन्तर्गत अथवा समीप था, अयोध्या द्वारा उसमें दखलन्दाजी करना राजनीति विरुद्ध होता। इसलिये निश्चित ही जो कदम उस समय उठाया गया,

वही मात्र सम्भव था। सोचा होगा, यदि राम दण्डकारण्य में अथवा रावण के शासन की सीमा से कहीं भी मुनिवेश में आकर रहते हैं, तो जल्दी ही कोई न कोई घटना ऐसी हो जानी सम्भव है जो राक्षसवर्ग के ध्वंस का उपयुक्त बहाना बन सके। यह सब जानते थे कि दशरथ व समस्त राजपरिवार एवं प्रजाजन राम को सीधे मार्ग से वन भेजना कोई स्वीकार न करेगा। सीधी उंगली से घी कभी नहीं निकलता। तब इस सम्भावित निन्दाजनक मोटी चादर रानी कैकेयी ने दृढ़तापूर्वक अपने ऊपर ओढ़ी और युग-युगों तक निन्दा के भार को सहना स्वीकार किया। कारण यह था कि जब देवों व ऋषि-मुनियों ने यह योजना बनाई थी, रानी कैकेयी भी प्रसंगवश उसमें भाग ले सकी थीं तथा देवों व ऋषि-मुनियों की परिस्थिति व सद्विचारों से पूर्णतया परिचित हो चुकी थी। इसीलिये लोग कहते हैं, यदि कैकेयी न होती, तो रामायण न बनती।

मेरे विचार से वाल्मीकि रामायण में ऐसे प्रासंगिक वास्तविक अंश विद्यमान हैं, जो रानी कैकेयी के राम, अयोध्या राजपरिवार एवं समस्त राष्ट्र की हितभावना से भरे उज्ज्वल निष्कलंक उदात्त चरित्र को पूर्णतया उजागर करने में समर्थ हैं, परन्तु कालान्तर में जब राम, महाराजा राम से अवतारी भगवान् राम बना दिये गये, तब राम के वन-गमन के प्रसंग को लक्ष्य कर रानी कैकेयी को लाञ्छित रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा, जो तुलसी रामायण में उपलब्ध है। सर्वसाधारण में रामकथा का वही पाठ्य ग्रन्थ है। उसी का बोलबाला है।

गजानन्द आर्य सभी रामभक्तजनों के बधाई के पात्र हैं, उन्होंने रामपरिवार के 'कलंक' को धोकर परिवार को चार चाँद लगाये हैं।

कहते हैं कि लक्ष्मी और सरस्वती की पारस्परिक स्थिति सौतिया डाह के समान हैं, दोनों कभी एक जगह नहीं रहतीं। पर आश्चर्य है, व्यवसायी गजानन्द आर्य के सामीप्य को लक्ष्मी के साथ सरस्वती भी छोड़ना नहीं चाहती।

कतिपय सुझाव-

१. श्लोकों के अर्थों को पुनः देख लिया जाय, तो अच्छा है। पृष्ठ ६६, पंक्ति १०१

२. रावण के लिये 'कामी' विशेषण नहीं जँचा। पृष्ठ ५५, पंक्ति १०

३. ग्रन्थ का सम्पादन आधुनिक रीति पर हो जाना उपयुक्त होगा जिससे विषय-सन्निवेश सुचारु हो जाये।

४. रामायण के अन्य अंशों पर भी इसी दृष्टिकोण से विचार प्रस्तुत किये जायें, तो आगे अध्येताओं के लिये लाभप्रद होगा। जैसे-

क. किष्किन्धा का वानर राजपरिवार व राज्य,

ख. राक्षस संस्कृति

ग. देवासुर संग्राम कहां हुआ, जिसमें कैकेयी सहित दशरथ सम्मिलित हुए? उस संग्राम में देव किस प्रदेश के थे? तथा असुर किस प्रदेश के?

घ. रामायण का ऐतिहासिक रूप इत्यादि।

भवदीय

आचार्य उदयवीर शास्त्री

आनन्द

जिस परमात्मा का यह 'ओ३म्' नाम है उसकी कृपा और अपने धर्मयुक्त पुरुषार्थ ये हमारे शरीर, मन और आत्मा का विविध दुःख जो कि अपने [से] दूसरे से होता है, नष्ट हो जावे और हम लोग प्रीति से एक-दूसरे के साथ वर्त्त के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि से सफल होके सदैव स्वयं आनन्द में रहकर सब को आनन्द में रखें।

- संस्कार विधि

रुबाईयात

– श्री गोविन्दस्वरूप व्यास 'महर'

(1)

आर्यो! सम्भलो नहीं तो एक दिन वो आयगा,
खूब ईसाई मजहब फिर हिन्द में बढ़ आयगा।
हाथ मलते ही रहोगे, देखकर फिर दुर्दशा,
क्या रहेगा गर तुम्हारा कारवाँ लुट जायगा।।

(2)

लोभ लालच में जो हो गद्दार है वो आर्य,
धर्म रक्षा के लिये बेकार है वो आर्य।
बढ़ गई मतलबपरस्ती, कौम की बिगड़ी दशा,
जो नहीं है दिया दिल, धिक्कार है वो आर्य॥

(3)

उठो धर्म वैदिक का डंका बजा दो,
दयानन्द का मन्त्र सब को सिखा दो।
विजय हो जमाने में वैदिक धरम की,
जो तुम आर्यों इस में तन मन लगा दो॥

(4)

जो स्वार्थ के वश में पड़े हैं हटा दो,
जो सोये हुवे हैं उन्हें फिर जगा दो।
करो धर्म रक्षा पै तन मन निछावर,
उठो धर्म वैदिक का डंका बजा दो॥

(5)

जिन्होंने कि अपनाई है खुद-परस्ती,
वो है देशद्रोही मिटै उनकी हस्ती।
तभी धर्म वैदिक का फिर ओज होगा,
मिटा दें जो भारत से फिरका परस्ती॥

(6)

साधु आश्रम यह कितना प्यारा है,
आनासागर का एक किनारा है।
आज इसमें भरा ऋषि मेला,
दया आनन्द का नजारा है॥

अजमेर

ऋषि उद्यान में ब्रह्मचारियों, वानप्रस्थियों, संन्यासियों को साधना, स्वाध्याय, सहयोग के लिए निमन्त्रण

अजमेर में **ऋषि उद्यान** आनासागर नामक झील के सुरम्य तट पर स्थित है। इसका संचालन महर्षि की उत्तराधिकारिणी श्रीमती परोपकारिणी सभा करती है। वृक्षावलियों एवं पुष्पोद्यान से सुशोभित यह आश्रम महर्षि-भक्तों का ध्यान आकर्षित करता रहता है। इस आश्रम में ही सभा द्वारा विभिन्न प्रकल्प संचालित किए जा रहे हैं। यहाँ देशी गायों की वृहद् गोशाला है, ब्रह्मचारियों के विद्याभ्यास के लिए गुरुकुल की व्यवस्था है। समागत अतिथियों के निवास व भोजन इत्यादि की उत्तम व्यवस्था है। इस आश्रम में दोनों समय सन्ध्या व यज्ञ का आयोजन किया जाता है। यह स्थान स्वाध्याय, योगाभ्यास एवं विद्याप्राप्ति का आदर्श केन्द्र है। समय-समय पर विभिन्न कार्यक्रमों, योगशिविरों, आर्यवीर-वीरांगनाओं के शिविरों, विशिष्ट विद्वानों के व्याख्यान इत्यादि का आयोजन इसकी जीवंतता के प्रमाण हैं।

सभी आर्य ब्रह्मचारियों तथा विशेषतः वानप्रस्थियों, संन्यासियों से निवेदन है कि अपनी आध्यात्मिक उन्नति एवं तप-स्वाध्याय के लिए स्थायी रूप से आश्रम में रहकर अपने जीवन को सार्थक करें तथा अपनी योग्यतानुसार सभा के प्रकल्पों में सहयोग करें।

ऋषि उद्यान में सोद्देश्य निवास करने के लिए इच्छुक आर्यजन कृपया अधोलिखित चलभाष-दूरभाष पर सम्पर्क करें -

१. श्री ओम्मुनि वानप्रस्थ (प्रधान) - 9950999679

२. श्री कन्हैयालाल आर्य (मन्त्री) - 9911197073

३. श्री रमेशचन्द्र आर्य, (ऋषि उद्यान) -9413356728

*** निवेदन ***

कीर्तिशेष आचार्य धर्मवीर जी ने अपने दानदाताओं के सहयोग से ऋषि उद्यान में निरन्तर चलने वाले ऋषि लंगर की व्यवस्था की थी, जो सतत संचालित हो रही है। इसमें ऋषि उद्यान की वृहद् भोजनशाला में **ऋषि उद्यान में निवास करने वाले योगसाधकों, संन्यासियों-वानप्रस्थियों, ब्रह्मचारियों व आचार्यों के भोजन, दुग्ध, फल इत्यादि की व्यवस्था की जाती है।**

ऋषि उद्यान में आने वाले अतिथियों, विद्वानों, दर्शनार्थियों इत्यादि के निवास तथा भोजनादि की व्यवस्था इसके अन्तर्गत संचालित की जाती है।

आर्य दानदाता-परिवारों के सहयोग से ही यह अतिथि-यज्ञ सम्भव हो पा रहा है। अतः हम सभी आर्य परिवारों का दायित्व एवं कर्त्तव्य है कि हम इस यज्ञ में होता बनकर निरन्तर दान-रूपी आहुति प्रदान कर पुण्य के भागी बनें। विभिन्न संस्कारों एवं अन्य शुभावसरों पर अपनी दान-रूपी आहुति देना न भूलें, ताकि यह लोकोपकारी अतिथि यज्ञ निरन्तर चलता रहे।

इस अतिथि यज्ञ हेतु आप **५१००/-(पाँच हजार एक सौ रुपये) प्रतिवर्ष** भेजकर अपना सहयोग प्रदान कर अनुग्रहीत करें।

ओम्मुनि
प्रधान

कन्हैयालाल आर्य
मन्त्री

।। आवश्यक सूचना ।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी सभा अजमेर के द्वारा संस्थापित एवं संचालित महर्षि दयानन्द गुरुकुल आश्रम , ग्राम-जमानी, त-इटारसी, जिला-नर्मदापुरम्, मध्यप्रदेश के नाम से दान की रसीद छपवाकर अनधिकृत रुप से कुछ लोग गुरुकुल के नाम से दान एकत्रित करके धन का दुरुपयोग कर रहे हैं, एकत्रित किये हुए दान को सभा में जमा भी नही करवाते हैं और न ही कोई हिसाब सभा को देते हैं।

आप सभी आर्य महानुभावों से निवेदन है कि अनधिकृत व्यक्तियों को दान न देवे, और यदि उपरोक्त नाम की रसीद से आपने दान दिया है तो उस रसीद को अथवा उसकी फोटोकापी को अति शीघ्र सभा के निम्न पते पर भिजवावे।

जिससे परोपकारिणी सभा द्वारा अनधिकृत रुप से रसीद छपवाकर दान एकत्रित करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध वैधानिक कार्यवाही की जा सके।

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, पिन- ३०५००१

दूरभाष - ९९१११९७०७३

ऋषि मेला-२०२५ की तारीख ७, ८ व ९ नवम्बर २०२५ से संशोधित करके **शुक्रवार, शनिवार व रविवार १०, ११ व १२ अक्टूबर २०२५ कर दी गई है।**

परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्यों पर

पुस्तक का नाम	पृ. सं.	वास्तविक मूल्य रुपये	छूट के साथ मूल्य रुपये
महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग)	१३९२	८००	५००
महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र	३३६	२००	१००
कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर (दोनों भाग)	९३८	९५०	६००
डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग)	८१४	५००	२५०

यजुर्वेद भाष्य (महर्षि दयानन्द सरस्वती) पृष्ठ संख्या- २१९७, चार भागों का मूल्य = १३००/-
डाक-व्यय सहित विशेष छूट पर उपलब्ध मूल्य = ११००/-

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-दूरभाष - 0145-2460120, चलभाष - 7878303382

VEDIC PUSTKALAYA
0510800A0198064
1342679A
0510800A0198064.mab@pnb

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु
खाताधारक का नाम - वैदिक पुस्तकालय, अजमेर
(VEDIC PUSTKALAYA, AJMER)
बैंक का नाम - पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-
0008000100067176
IFSC - PUNB0000800
UPI ID :
0510800A0198064.mab@pnb

प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में सञ्चालित आर्ष गुरुकुल में प्रवेश प्रारम्भ हैं। वैदिक धर्म के उपदेशक-प्रचारक बनने के इच्छुक युवा प्रवेश हेतु शीघ्र आवेदन करें।

प्रवेश हेतु अविवाहित एवं आठवीं उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। भोजन एवं आवास की निःशुल्क सुविधा है। **सम्पर्क सूत्र: ८८९०३१६९६१**

आर्य संस्थाओं से आग्रह

आर्य समाज एवं अन्य आर्य संस्थाएं अपने निर्वाचन, वार्षिकोत्सव और योग शिविर आदि आयोजन के संक्षिप्त समाचार परोपकारी में प्रकाशनार्थ भिजवा सकते हैं।

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते? तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में पञ्चमहायज्ञ अवश्य करणीय कर्म हैं। इन्हीं में से एक है- अतिथि यज्ञ। प्रत्येक गृहस्थ के लिए अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और वह राशि एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल/आश्रम में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय। इस राशि को प्रदान कर सभा के माध्यम से अतिथि यज्ञ सम्पन्न कर सकते हैं।

सभा की योजना के अनुसार प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी होता सदस्यों में अंकित किया जाता है, ऐसे सज्जनों के नाम परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक/सभा के खाते में ऑनलाइन द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं।

आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि, जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे, तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है।

दूरभाष - **8890316961**

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715** **IFSC-SBIN0031588**

email : psabhaa@gmail.com **सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961**

‘सत्यार्थ प्रकाश’ एवं ‘महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र’ प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत अमर ग्रन्थ ‘सत्यार्थप्रकाश’ ने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति ‘वैचारिक क्रान्ति’ को जन्म दिया। अत: परोपकारिणी सभा ने ७ वर्ष पूर्व ‘विश्व पुस्तक मेला’ दिल्ली में प्रतिवर्ष **‘सत्यार्थप्रकाश’** के साथ **‘महर्षि का जीवन-चरित्र’** एवं **‘आर्याभिविनय’** पुस्तक का वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है।

एक सैट की छपाई का खर्च लगभग १५० रु. आता है। ५०० **से कम प्रतियों पर स्टिकर लगाकर तथा ५०० या अधिक प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित किया जाएगा।**

१५० रु. प्रति सैट के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं।

अपने दान के साथ ‘सत्यार्थप्रकाश वितरण’ अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	३०००/- रु.
	३० प्रतियाँ	४५००/- रु.
	५० प्रतियाँ	७५००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	१५०००/- रु.
	५०० प्रतियाँ	७५०००/- रु.
	१००० प्रतियाँ	१,५०,०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी राशि दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। धन्यवाद।

- कन्हैयालाल आर्य, मंत्री, परोपकारिणी सभा

सभा प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

बैंक विवरण

खाताधारक का नाम

परोपकारिणी सभा, अजमेर

(PAROPKARINI SABHA AJMER)

बैंक का नाम

भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-

10158172715

IFSC - SBIN0031588

UPI ID : PROPKARNI@SBI

हैदराबाद सत्याग्रह हेतु धर्म युद्ध के वीर सैनिकों की सहायक समिति अजमेर में देशभक्त कुंवर चंद करण शारदा

हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के द्वितीय सर्वाधिकारी देशभक्त कुँवर चाँदकरण शारदा धर्मयुद्ध के वीर सैनिकों के साथ वृन्दावन गुरुकुल के छात्रों, अनेक आर्यजनों के साथ आन्दोलन में शामिल होने गये थे। शारदा जी को एक वर्ष का सश्रम कारावास एवं एक मास की सादी कैद की सजा दी गई थी। कुँवर शारदा जी निर्भीक होकर सत्याग्रह में सम्मिलित हुए, उन्होंने निजामशाही के विरुद्ध निजाम-राज्य में नारे लगवाये थे, नियमों को तोड़कर जेल में ही प्रतिदिन यज्ञ जारी रखा। इस आंदोलन की विशेषता थी अजमेर के निवासी सैयद फैयाज अली जो इस सत्याग्रह में साथ थे।

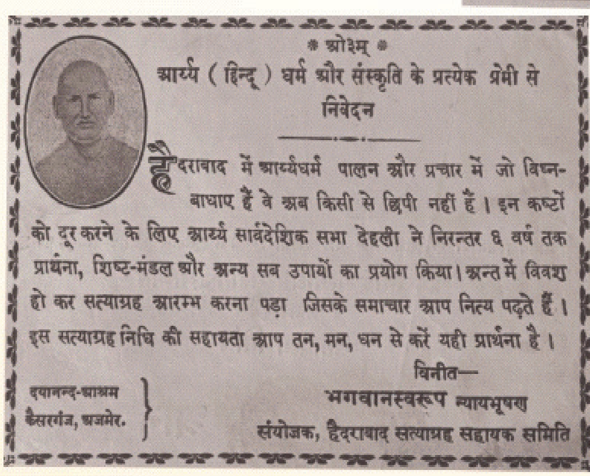

* ओ३म् *

आर्य्य (हिन्दू) धर्म और संस्कृति के प्रत्येक प्रेमी से निवेदन

हैदराबाद में आर्य्यधर्म पालन और प्रचार में जो विघ्न-बाधाए हैं वे अब किसी से छिपी नहीं हैं। इन कष्टों को दूर करने के लिए आर्य्य सार्वदेशिक सभा देहली ने निरन्तर ६ वर्ष तक प्रार्थना, शिष्ट-मंडल और अन्य सब उपायों का प्रयोग किया। अन्त में विवश हो कर सत्याग्रह आरम्भ करना पड़ा जिसके समाचार आप नित्य पढ़ते हैं। इस सत्याग्रह निधि की सहायता आप तन, मन, धन से करें यही प्रार्थना है।

विनीत—

भगवानस्वरूप न्यायभूषण

संयोजक, हैदराबाद सत्याग्रह सहायक समिति

दयानन्द-आश्रम
कैसरगंज, अजमेर.

आर जे/ए जे/80/2024-2026 तक प्रेषण : ३०-३१ जुलाई २०२५ आर.एन.आई. ३९५९/५९

पंडित बुद्धदेव विद्यालंकार
(स्वामी समर्पणानंद सरस्वती)
पुण्यतिथि : 1 अगस्त

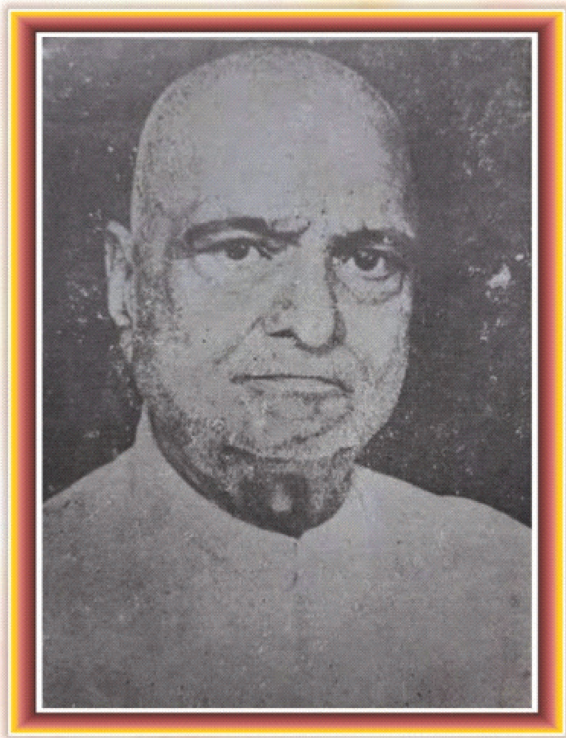

वेदों के अद्भुत व्याख्याता-भाष्यकार, शतपथ ब्राह्मण के व्याख्याता, गीता की आर्ष व्याख्या के प्रस्तोता, प्रसिद्ध शास्त्रार्थ-महारथी, हिन्दी-संस्कृत के रससिद्ध कवि ! आर्य जगत् के गौरव ! परोपकारिणी सभा की ओर से भावपूर्ण स्मरण !

प्रेषकः
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००१

सेवा में,

डाक टिकिट